दश लक्षण विधान (लघु)

''माण्डला''

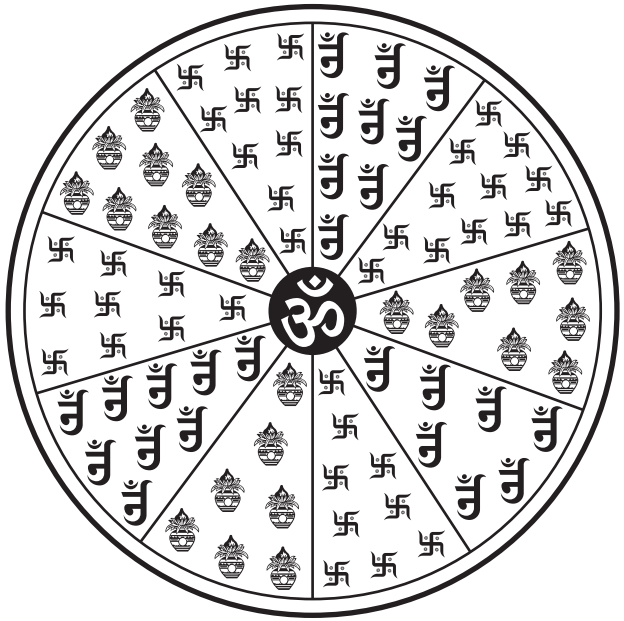

बीच में - ॐ
प्रथम कोष्ठ - 8
द्वितीय कोष्ठ - 9
तृतीय कोष्ठ - 9
चतुर्थ कोष्ठ - 9
पंचम कोष्ठ - 10
षष्ठम कोष्ठ - 9
सप्तम कोष्ठ - 12
अष्टम कोष्ठ - 8
नवम कोष्ठ - 7
दशम कोष्ठ - 9
कुल - 90 अर्घ्य

रचयिता :

प. पू. साहित्य रत्नाकर आचार्य श्री विशदसागर जी महाराज

कृति - **दश लक्षण विधान (लघु)**

रचयिता - प. पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज

संस्करण - प्रथम-2021, प्रतियाँ - 1000

संकलन - मुनि 108 श्री विशाल सागर जी महाराज

सम्पादन - आर्यिका श्री भक्तिभारती माताजी
क्षुल्लिका श्री वात्सल्य भारती माताजी

सहयोग - क्षुल्लक श्री विसौम सागर जी, ब्र. प्रदीप भैय्या

सम्पादन - ज्योति दीदी-9829076085, आस्था दीदी-9660996425

संयोजन - सपना दीदी-9829127533, आरती दीदी-8700876822

सम्पर्क सूत्र - 1. सुरेश जैन सेठी, शांति नगर, जयपुर - 9413336017
2. महेन्द्र कुमार जैन, सैक्टर-3 रोहिणी - 09810570747
3. हरीश जैन, दिल्ली - 9136248971
4. पदम जैन, रेवाड़ी - 09416888879
5. श्री सरस्वती पेपर स्टोर, चांदी की टकसाल, जयपुर
मो.: 8114417253

पुण्यार्जक :
मा. नमन जैन, नमिश जैन, अनूप जैन, देवांश जैन एवं कु. त्रिशा जैन
के जन्म दिवस के उपलक्ष्य में
नानी ! दादी श्रीमती सुकेशी जैन पत्नी योगेन्द्र कुमार जैन एडवोकेट
जैन नगर, जी.ग्रा. रोड, एटा परिवार मो.: 9412430661, 9758075873

मुद्रक - बसन्त जैन, श्री सरस्वती प्रिन्टिंग इण्स्ट्रीज, SBI के नीचे, चांदी की टकसाल, जयपुर - मो.: 8114417253, 8561023344
ईमेल : jainbasant02@gmail.com

मूल्य - 70/- रु. मात्र

विशाल हृदय के उद्गार

एक वर्ष में 3 बार माघ चैत्र भादौं में सोलहकारण एवं दशलक्षण पर्व आते हैं। जैन समाज में भादौं के महिने में दशलक्षण का विशेष प्रभाव देखा जाता है। अनेक भक्तगण दश दिन उपवास रखते हैं। कोई पानी मात्र लेकर अथवा अल्प आहार लेकर कोई एकाशन करके दश दिन निकालते हैं। मंदिरों में पूजा पाठ करने वालों की भीड़ हो जाती है। अपने अपने हिसाब से अलग-अलग बैठकर अथवा सामूहिक बैठकर जिनवाणी में से विनय पाठ पूजाएँ आदि करते रहते हैं। इन दिनों अलग-अलग दिन में अलग-अलग पूजाओं की संख्या पर्वों के हिसाब से बढ़ जाती है। आफिस, दुकान, स्कूल जाने वालों को समय की अनुकूलता नहीं होने से पूजा पाठ से वंचित भी रहना पड़ता है।

वर्तमान के सर्वाधिक 215 प्रकार के विधानों के रचयिता साहित्य रत्नाकर आचार्य श्री विशद सागर जी ने वर्तमान स्थिति में समय की परिस्थिति को देखते हुए लघु विनय पाठ व पूजाओं की रचना की है। पूर्व में दशलक्षण विधान कुछ बड़ा था हमने आचार्य श्री से निवेदन किया कि दशलक्षण व्रत का उद्यापन करने वाले यदि एक ही दिन में दशलक्षण विधान करना चाहे तो उनके लिए लघु दशलक्षण विधान भी तैयार करें। बरेली में मात्र 3 घण्टे की अल्पअवधि में प्रस्तुत दशलक्षण विधान की रचना कर दी। भारी धर्म प्रभावना के साथ दश दिन तक प्रतिदिन बड़ा दशलक्षण विधान अथवा लघु दशलक्षण विधान कर अपने व्रतों का उद्यापन करें।

प्रस्तुत पुस्तक में आचार्य श्री विशद सागर जी द्वारा रचित संस्कृत पूजा एवं संस्कृत विधान का भी समावेश किया है, संस्कृत पूजा विधान की रुचि वाले दशलक्षण एवं रत्नत्रय विधान संस्कृत भाषा में करके लाभ प्राप्त कर सकते है।

प्रस्तुत विधान में अलग प्रकार से अर्घ्यों की संरचना की गई है। क्षमावाणी पर्व पर हम अपने परिवार, रिश्तेदार, समाज वालों से क्षमा माँगते हैं, परन्तु हमें सर्वप्रथम देव-शास्त्र गुरु से क्षमा माँगना चाहिए। एकेन्द्रिय आदि जीवों से भी क्षमा मांगनी चाहिए। भक्तगण पर्वराज पर्युषण में दस दिन धर्माराधना रूप में प्रस्तुत विधान पूजा करके अपने आपको धर्ममय बनाने में समर्थ होंगे। पापों का प्रक्षालन कर सातिशय पुण्यार्जन भी कर सकेंगे। पुनः गुरुवर के श्री चरणों में त्रि भक्ति पूर्वक नमोस्तु करते हुए यही भावना भाते हैं हम भी दसलक्षण धर्म की आराधना करके पूर्णता को प्राप्त करें।

मुनि विशाल सागर (संघस्थ)

दिनांक

अतिशय तीर्थक्षेत्र कम्पिला जी

दशलक्षण पूजा (संस्कृत)

उत्तम-क्षान्तिकाद्यन्त-ब्रह्मचर्य-सुलक्षणम्।
स्थापयेद्दशधा धर्म-मुत्तमं जिनभाषितम्।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

प्रालेय-शैल-शुचि-निर्गत-चारु-तोयैः
शीतैः सुगन्ध-सहितैर्मुनि-चित्त-तुल्यैः।
संपूजयामि दशलक्षण-धर्ममेकं
संसार-ताप-हननाय क्षमादियुक्तम्।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागा-किंचन्यब्रह्मचर्यधर्मेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीचन्दनैर्बहुल-कुङ्कुम-चन्द्र-मिश्रैः
संवास-वासित-दिशा-मुख दिव्य-संस्थैः।
संपूजयामि दशलक्षण-धर्ममेकं
संसार-ताप-हननाय क्षमादियुक्तम्।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मांगाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शालीय-शुद्ध-सरलामल-पुण्य-पुंजैः
रम्यैः-रखण्ड-शश-लांछन-रूप-तुल्यैः।।
संपूजयामि दशलक्षण-धर्ममेकं
संसार-ताप-हननाय क्षमादियुक्तम्।।3।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मांगाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्दार-कुन्द-बकुलोत्पल-पारिजातैः
एवं सुगन्ध-सुरभीकृतमूर्ध्वलोकैः।
संपूजयामि दशक्षण-धर्ममेकं
संसार-ताप-हननाय क्षमादियुक्तम्।।4।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मांगाय कामबाणविध्वंसनाय निर्वपामीति स्वाहा।

अत्युतमैः षड्-रसादिक-सद्यजातैः-
नैवेद्यकैश्च परितोषित-भव्य-लोकैः।
संपूजयामि दशलक्षण-धर्ममेकं
संसार-ताप-हननाय क्षमादियुक्तम्।।5।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मांगाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा

दीपैर्विनाशित-तमोत्कररुद्ध-नेत्रैः
कर्पूर-वर्ति-ज्वलितोज्ज्वल-भाजनस्थैः।
संपूजयामि दशलक्षण-धर्ममेकं
संसार-ताप-हननाय शमादियुक्तम्।।6।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मांगाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागुरु-प्रभृति-सर्व-सुगन्ध-द्रव्यैर्-
धूपैस्तिरोहित-दिशा-मुख-दिव्य-धूम्रैः।
संपूजयामि दशलक्षण-धर्ममेकं
संसार-ताप-हननाय शमादियुक्तम्।।7।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मांगाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पूगैर्लवंग-कदली-फल-नारिकेलर्-
हृद्-घ्राण-नेत्र-सुखदैः शिव-दान-दक्षैः।
संपूजयामि दशलक्षण-धर्ममेकं
संसार-ताप-हननाय शमादियुक्तम्।।8।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मांगाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पानीय-स्वच्छ-हरि-चन्दन-पुष्प-सारैः
शालीय-तन्दुल-निवेद्य-सुचन्द्र-दीपैः।
धूपैः फला वलि विनिर्मित पुष्प गंधैः
पुष्पांजलिभिरिह धर्म महं समर्चे।।9।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

(इन्द्र वज्रा छन्द)

येषां भ्रुवः क्षेपण मात्रतोऽपि, शक्रस्य शक्रत्व विघातनं स्यात्।
एवं विधा अप्युदित कुधार्तो, क्षमां भजन्ते ननु तान्नमामि।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न जाति लाभैश्यविदंग रूप, मदाः कदाचिज्जननं प्रयांति।
येषां मृदिम्ना गुरुणार्द्र चित्ताः, ये दद्युरीशाः स्तवनाच्छिवं मे।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनोवचः काय कदम्बकानां, समानता यस्य समस्ति लक्ष्म।
तमार्जवं सन्तत-मर्जनीयं, यतीन्द्र पूज्यं परिपूजयामः।।3।।

ॐ ह्रीं उत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न लोभ रक्षोऽभ्युदयो न तृष्णा, गृद्धी पिशाच्यौ सविधं सदेतः।
तस्माच्छुचित्वात्म विभा चकास्ति, येषां न पावस्थल-महं नमामि।।4।।

ॐ ह्रीं उत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्यं वचः सिद्धि कराः त्रिलोके, भूतः भवन्ता किल भाविनश्च।
तीर्थेश सर्वे हत मोह तन्द्राः, सत्यं वचः विशदं कत्थमाने।।5।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवाटवी भीत भवि व्रजस्य, विमुक्ति पर्याप्ति समुत्सुकस्य।
सुनिर्भया विभ्रम हेतवो जे, सत् संयमायत् शिव सौख्यकारिं।।6।।

ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तपः परं सिद्धि कराः त्रिलोक्ये, देवेन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्र पूज्याः।
चिंतामणीव स्व हितैषणां च, सौख्यालया धर्म धुरं दधाना।।7।।

ॐ ह्रीं उत्तम तप धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समस्त जन्तुष्वभयं परार्थ, संपत्करी ज्ञान सुदत्तिरिष्टा।
धर्मौषधीशा अपि ते मुनीशास्-त्यागेश्वरा द्रान्तु मनोमलानि।।8।।

ॐ ह्रीं उत्तम त्याग धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुर्वार कर्मास्त्रव-वारणं यत्, संसाधनं दुर्जय निर्जरायाः।
तदत्र मूर्च्छा विलयैक रूपं, महाव्रतं संतत-माश्रयामि।।9।।

ॐ ह्रीं उत्तम आकिंचन्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये ब्रह्मचर्येण युता भवन्ति, भवन्ति ते नाग-नरेन्द्र मान्याः।
योगीन्द्र वन्द्यं सरणिं शिवस्य, नमामि तद्धर्म धरापतिं तम्।।10।।

ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अनुष्टुप छन्द)

धर्मो गुरुश्च मित्रं च, धर्मः स्वामी च बांधवः।
अनाथ-वत्सलः सोऽयं, स त्राता कारणं बिना।।11।।

ॐ ह्रीं दशलक्षण धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

इय काऊण णिज्जरं, जे हणंति भवपिंजरं।
णीरोयं अजरामरं, ते लहंति सुक्खं परं।।1।।

(धोदक छन्द)

जेण मोक्ख-फलु तं पाविज्जइ,
सो धम्मंगो एहहु किज्जइ।
खयय खमायलु तुंगय देहउ,
मद्दउ पल्लउ अज्जउ साहउ।।2।।
सच्च सउच्च मूल संजमु दलु,
दुविह महातव णव-कुसुमाउलु।
चउविह चाउ पसारिय परिमलु,
पीणिय-भव्वलोय-छप्पयउलु।।3।।
दिय-संदोह-सद्द-कयकलयलु,
सुर-णरवर-खेयर सुह सय फलु।
दीणाणाह-दीह-सम-णिग्गहु,
सुद्ध-सोम-तणुमत्तु परिग्गहु।।4।।
वंभचेरु छायाइं सुहासिउ,
रायहंस-णियरेहिं समासिउ।
एहउ थम्म-रुक्खु लक्खिज्जइ,
जीवदया बहुविधि पालिज्जई।।5।।
झाण-ट्ठाणु भल्लारउ किज्जइ,
मिच्छामयहं पबेसु ण दिज्जइ।
सील-सलिलधारहिं सिंचिज्जइ,
एम पयत्ते बड्ढारिज्जइ।।6।।

(घत्ता छन्द)

कोहाणलु चुक्कउ, होउ गुरुक्कउ,
जाइ रिसिंदहिं सिट्ठइं।
जगताइं सुहंकरु, धम्म-महातरु,
देह फलाइं सुमिट्ठइं।।7।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार सागरोत्तीर्णं, मोक्ष सौख्य पदप्रदम्।
नमामि 'विशदः' धर्मं, पुष्पांजलिं ततः क्षिपेत्।।

(इत्याशीर्वादः)

दश लक्षण मण्डल विधान स्तवन

वृषभादी चौबीस जिनेश्वर, भरत क्षेत्र में हुए महान्।
अनन्त चतुष्टय पाने वाले, 'विशद' पुण्य के रहे निधान।।
उत्तम क्षमा आदि धर्मों का, कथन किए जो मंगलकार।
सुर नर मुनि सब वन्दन करते, जिनके चरणों बारम्बार।।

दोहा - दश लक्षण शुभ धर्म के, होते महिमावन्त।
काल अनादी जो रहे, जिनका आदि न अन्त।।
भव रोगों के नाश को, औषधि है मनहार।
व्रत करके दश धर्म का, मिलता भव से पार।।
भव सागर के पार को, नौका रहे महान्।
भव सुख हेतू कल्पतरु, देते पद निर्वाण।।

(गीता छन्द)

मनरूप मर्कट को विशद यह, श्रेष्ठ बन्धन जानिए।
गज इन्द्रियों को सिंह जैसा, मोह तम रवि मानिए।।
है स्वर्ग की सीढ़ी मनोहर, व्रत सु मंगलकार है।
करता जगत कल्याण अपना, व्रत धरम का सार है।।

(बेसरी)

दश लक्षण व्रत करने वाले, जग में होते लोग निराले।
साधर्मी वह लोग कहाते, जो सम्मान सभी से पाते।।
सुख शांती आनन्द प्रदाता, जैन धर्म है जग का त्राता।
सुर नर महिमा जिसकी गावें, व्रत धारण करके हर्षावें।।

दोहा - दश प्रकार का धर्म यह, कल्पतरू दश जान।
इच्छित फल दायक विशद, जग में रहे महान्।।
धर्म जीव का ताज है, धर्म हमारा नाथ।
यही भावना है मेरी, भव-भव में हो साथ।।

सोरठा - महिमा मयी महान, धर्म लोक में है 'विशद'।
है शिव का सोपान, पाके पाएँ सिद्ध पद।।

दशलक्षण स्तवन

(अनुष्टुप छन्द)

ऐनकेनेऽपि दुष्टेन, पीडिते - नऽपि कुत्रचित्।
क्षमा त्याज्यान भव्येन, स्वर्ग मोक्षाभिलाशिणा।। 1।।
मृदुत्त्वं सर्व भूदेषु, कार्यं जीवेन सर्वदा।
काठिन्यं त्यज्यते नित्यं, धर्म बुद्धि विजानता।। 2।।
आर्यत्त्व क्रियते सम्यक्, दुष्ट बुद्धिश्च त्यज्यते।
पाप चिंता ना कर्त्तव्या, श्रावकै-र्धर्म चिन्तकैः।। 3।।
बाह्याभ्यन्तरश्चापि मनो-वाक्काय शुद्धिभिः।
सुचित्तेण सदा भव्यं, पाप भीतैः सु श्रावकैः।। 4।।
असत्यं सर्वथा त्याज्यं, दुष्ट वाक्यं च सर्वथा।
पर निंदा ना कर्त्तव्या, भव्येनापि च सर्वदा।। 5।।
संयमं द्विविधं लोके, कथितं मुनि पुंगवैः।
पालनीयं पुनश्चित्ते, भव्य जीवेन सर्वदा।। 6।।
द्वादशं द्विविधं लोके, बाह्याभ्यंतर भेदतः।
स्वयं शक्ति प्रमाणेन, क्रियते धर्म वेदिभिः।। 7।।
चतुर्विधाय संघाय, दानं चैव चतुर्विधं।
दातव्या सर्वदा सद्भिः, चिन्तकैः पारलौकिकैः।।8।।
चतुर्विंशति संख्यातो, यो परिग्रह ईरितः।
तस्य संख्या प्रकर्तव्या तृष्णा रहित चेतसः।। 9।।
नवधा सर्वदा पाल्यं, शीलं संतोष धारिभिः।
भेदाभेदेन संयुक्तं, सद् गुरुणां प्रसादतः।। 10।।

धर्मेण भोगाः सुलभा नराणां।
धर्मेण तिष्ठन्ति यशांसि लोके।।
धर्मेण बन्ध्वा रिपवो भवन्ति।
तस्मात् सुधर्मं 'विशदं' नमामि।।11।।

दशलक्षण विधान पूजा

स्थापना

उत्तमक्षमा मार्दव आर्जव, शौच सत्य संयम तप त्याग।
आकिञ्चन ब्रह्मचर्य धर्मदश, धारण से साता अनुभाग।।
प्राप्त करें इस जग के प्राणी, क्रमशः पाएँ शिव सोपान।
प्रभु पद में दश धर्मों का हम, भाव सहित करते आह्वान्।।
दोहा - आह्वानन् स्थापना, सन्निधिकरण विशेष।
करते हैं हम भाव से, तव पद श्री जिनेश।।

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा मार्दवार्जव शौच सत्य संयम तप त्यागाकिंचन्य ब्रह्मचर्येति दशलक्षण धर्म! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

तर्ज- हे वीर तुम्हारे... (शम्भू छन्द)

इन्द्रियों के विषयों की आशा, हम पूर्ण नहीं कर पाए हैं।
हे नाथ! अतीन्द्रिय सुख पाने, यह नीर चढ़ाने लाए हैं।।
पूजा करके दशलक्षण की, प्रभु पद में शीश झुकाते हैं।
दश धर्मों को पा जाएँ हम, यह विशद भावना भाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

भव के भोगों में फसें रहे, हम मुक्त नहीं हो पाए हैं।
मुक्ती पाने भव आतप से, चन्दन घिस कर यह लाए हैं।।
पूजा करके दशलक्षण की, प्रभु पद में शीश झुकाते हैं।
दश धर्मों को पा जाएँ हम, यह विशद भावना भाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्व. स्वाहा।

भटके हैं तीनों लोको में, पर स्व पद हम न पाए हैं।
अक्षय पद पाने हेतू यह, अक्षय अक्षत हम लाए हैं।।
पूजा करके दशलक्षण की, प्रभु पद में शीश झुकाते हैं।
दश धर्मों को पा जाएँ हम, यह विशद भावना भाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

पीड़ित हो काम व्यथा से कई, हम जन्म गँवाते आए हैं।
हो काम वासना नाश प्रभो!, हम पुष्प चढ़ाने लाए हैं।।
पूजा करके दशलक्षण की, प्रभु पद में शीश झुकाते हैं।
दश धर्मों को पा जाएँ हम, यह विशद भावना भाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

हम क्षुधा वेदना से व्याकुल, भव-भव में होते आए हैं।
अब क्षुधा व्याधि के नाश हेतु, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।।
पूजा करके दशलक्षण की, प्रभु पद में शीश झुकाते हैं।
दश धर्मों को पा जाएँ हम, यह विशद भावना भाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

मोहित करता है मोहकर्म, हम उससे नाथ! सताए हैं।
अब नाश हेतु इस शत्रू के, यह दीप जलाने लाए हैं।।
पूजा करके दशलक्षण की, प्रभु पद में शीश झुकाते हैं।
दश धर्मों को पा जाएँ हम, यह विशद भावना भाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अष्ट कर्म के बन्धन में, बँधकर जग में भटकाए हैं।
अब नाश हेतु उन कर्मों के, यह धूप जलाने लाए हैं।।
पूजा करके दशलक्षण की, प्रभु पद में शीश झुकाते हैं।
दश धर्मों को पा जाएँ हम, यह विशद भावना भाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल हैं कितने सारे जग में, गिनती भी न कर पाए हैं।
वह त्याग मोक्षफल पाने को, यह फल अर्पण को लाए हैं।।
पूजा करके दशलक्षण की, प्रभु पद में शीश झुकाते हैं।
दश धर्मों को पा जाएँ हम, यह विशद भावना भाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो मोक्षफल प्राप्ताय फलं निव. स्वाहा।

संसार वास दुखकारी है, अब इससे हम घबराए हैं।
पाने अनर्घ्य पद नाथ! परम, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।।
पूजा करके दशलक्षण की, प्रभु पद में शीश झुकाते हैं।
दश धर्मों को पा जाएँ हम, यह विशद भावना भाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं निव. स्वाहा।

दोहा - जल स्वभाव शीतल रहा, ताप शीत से हीन।
जल धारा देते यहाँ, होंय कर्म सब क्षीण।।

शान्तये शांतिधारा

दोहा - पुष्प सुगन्धीवान हों, साथ रही मकरंद।
पुष्पांजलि करते यहाँ, होंय कर्म सब अन्त।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

जयमाला

दोहा - धर्म कहे दशलक्षणी, पावन परम त्रिकाल।
पाने को गाते यहाँ, जिनकी हम जयमाल।।

(ज्ञानोदय छंद)

उत्तम क्षमा धर्म है भाई, भवि जीवों को करुणाकार।
क्षमाधर्म के धारी होते, करते हैं स्व-पर उपकार।।
मार्दव धर्म धारने वाले, विनय भाव करते सम्प्राप्त।
विनय सम्पन्न भावना एवं, विनय सुतप धर करते प्राप्त।।1।।
आर्जव धर्म प्राप्त करते हों, सरल भाव जिनके शुभकार।
योग रोध करने वाले हों, अतिशय भव सिन्धू से पार।।
शौच धर्म निर्मलता कारी, भवि जीवों को करे विशुद्ध।
शौच धर्म से हो जाती है, चित् स्वरूप यह आतम शुद्ध।।2।।
सत्य धर्म की महिमा अनुपम, धारण करते हैं जो जीव।
जिसके फल से जग के प्राणी, पुण्य प्राप्त शुभ करें अतीव।।
संयम धारण करके कर्मों, का संवर हो महति महान।
गुप्ति समिति धर्मानुप्रेक्षा, परिषह जय धर चारितवान।।3।।
द्वादश तप से कर्म निर्जरा, करते हैं पावन ऋषिराज।
अनुक्रम से फिर प्राप्त करें वे, अतिशय मोक्ष महल का ताज।।
बाह्याभ्यन्तर रहा परिग्रह, मुनिवर करते हैं परित्याग।
रमण करें निज चेतन रस में, धर्म प्राप्त करते हैं त्याग।।4।।
आकिञ्चन्य धर्म के धारी, किञ्चित भी न रखते राग।
मोक्ष मार्ग के राही बनते, मन में धारण करें विराग।।
निज स्वरूप में रमने वाले, ब्रह्मचर्य व्रत धरें प्रधान।
उत्तम ब्रह्मचर्य व्रतधारी, पावें पद पावन निर्वाण।।5।।

दोहा - दशधर्मों को धारकर, पाएँ शिव सोपान।
कर्म नाशकर के विशद, पावें पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा मार्दवार्जव शौच सत्य संयम तपस्त्यागाकिंचन्य ब्रह्मचर्य दशलक्षण धर्मेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा - महिमा श्री जिनधर्म की, जग में रही महान।
धर्म धार कर जीव शुभ, प्राप्त करें निर्वाण।।

।। इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत)।।

दशलक्षण विधान की अर्घ्यावली

दोहा - उत्तम क्षमादि धर्म दश, शिव पद के सोपान।
पुष्पांजलि करते विशद, करने जिन गुणगान।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपामि

उत्तम क्षमा धर्म के अर्घ्य

(ज्ञानोदय छन्द)

निन्दा की जिन-जिन प्रतिमा की, खण्डित कर अपमान किया।
क्षमा होय अपराध अंजना, सम जो मैने पाप किया।। 1।।

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र देवं प्रति कृतापराध निराकरणाय उत्तमक्षमा धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्व.।

दण्डक या राजा श्रेणिक सम, मुनियों को जो कष्ट दिया।
क्षमा चाहते सह धर्मी से, कभी क्रोध का भाव किया।।2।।

ॐ ह्रीं निर्ग्रन्थ गुरुं प्रति कृतापराध निराकरणाय उत्तमक्षमा धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्व.।

पूर्वभवों में शिवभूति मुनि, ज्ञानावरण जो बाँध लिया।
क्षमा चाहते ज्ञान में कोई, बाधा कारी कार्य किया।।3।।

ॐ ह्रीं श्री जिनागमं प्रति कृतापराध निराकरणाय उत्तमक्षमा धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्व.।

राग द्वेष से स्वजन परिजन, से कोई भी व्यंग्य किया।
क्षमा होय अपराध हमारा, कोई किसी को दुःख दिया।।4।।

ॐ ह्रीं बन्धु बान्धवं प्रति कृतापराध निराकरणाय उत्तमक्षमा धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्व.।

भू जल अग्नी वायु वनस्पति, स्थावर यह कहलाए।
क्षमा करें स्थावर सारे, हमसे जो कोई दुख पाए।।5।।

ॐ ह्रीं पंचस्थावर प्रति कृतापराध निराकरणाय उत्तमक्षमा धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्व.।

विकल जीव द्वय त्रिचउ इन्द्री, पंचेन्द्रिय जो भी गाए।
क्षमा चाहते उनसे कोई, जो भी हमसे दुख पाए।।6।।

ॐ ह्रीं विकलत्रयं प्रति कृतापराध निराकरणाय उत्तमक्षमा धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्व.।

बादर सूक्ष्म रहे जो प्राणी, हमसे कोई दुख पाए।
क्षमा करें वे प्राणी सारे, मन में कोई अकुलाए।।7।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म बादर जीवं प्रति कृतापराध निराकरणाय उत्तमक्षमा धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्व.।

करते क्षमा सभी जीवों को, हमको भी सब क्षमा करें।
क्षमा धर्म है शिव का साधक, सभी हृदय से क्षमा धरें।।8।।

ॐ ह्रीं सर्वशत्रु वर्गं प्रति कृतापराध निराकरणाय उत्तमक्षमा धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्व.।

उत्तम मार्दव धर्म के अर्घ्य

चौपाई

ज्ञान का मद जो करते प्राणी, वे हो जाते हैं अज्ञानी।
ज्ञानावरण कर्म न पाएँ, हे प्रभु! मार्दव धर्म जगाएँ।।9।।

ॐ ह्रीं ज्ञानमद रहितोत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ख्याती पूजा के मदकारी, कर्म बन्ध करते हैं भारी।
हे प्रभु! यह मद ना हम पाएँ, मन में मार्दव धर्म जगाएँ।।10।।

ॐ ह्रीं पूजामद रहितोत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो होते कुल के मदकारी, पाएँ कर्म बन्ध भयकारी।
हे प्रभु! यह मद ना हम पाएँ, मन में मार्दव धर्म जगाएँ।।11।।

ॐ ह्रीं कुलमद रहितोत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाती का मद करें कराएँ, कर्म बन्ध वह भारी पाएँ।
हे प्रभु! यह मद ना हम पाएँ, मन में मार्दव धर्म जगाएँ।।12।।

ॐ ह्रीं जातिमद रहितोत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बल तन का है वह क्षय जाए, बल का मद क्यों प्राणी पाए।
हे प्रभु! यह मद ना हम पाएँ, मन में मार्दव धर्म जगाएँ।।13।।

ॐ ह्रीं बलमद रहितोत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋद्धि सिद्धियाँ हैं क्षयकारी, अतः बनो मद के परिहारी।
हे प्रभु! यह मद ना हम पाएँ, मन में मार्दव धर्म जगाएँ।।14।।

ॐ ह्रीं ऋद्धिमद रहितोत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म निर्जरा तप कर पाएँ, मद करके वंचित हो जाएँ।
हे प्रभु! यह मद ना हम पाएँ, मन में मार्दव धर्म जगाएँ।।15।।

ॐ ह्रीं तपमद रहितोत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्थिर जड़ यह देह बताई, मद फिर किसका करते भाई।
हे प्रभु! यह मद ना हम पाएँ, मन में मार्दव धर्म जगाएँ।।16।।

ॐ ह्रीं वपुषामद रहितोत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमेष्ठी जिनगृह जिनवाणी, जैन धर्म प्रतिमा कल्याणी।
हे प्रभु! यह मद ना हम पाएँ, मन में मार्दव धर्म जगाएँ।।17।।

ॐ ह्रीं विनयगुण सहितोत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम आर्जव धर्म के अर्घ्य

(नरेन्द्र छन्द)

मिथ्यात्वी अनन्तानुबन्धी, करते मायाचारी।
सरल भाव पाए सम्यक्त्वी, हो आर्जव का धारी।।18।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबंधी माया रहितोत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अप्रत्याख्यान कषायोदय में, देशव्रती ना होवे।
आर्जव धर्म जगाए जो नर, मायाचारी खोवे।।19।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरण माया रहितोत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्याख्यान कषायोदय में, संयम ना धर पावे।
उत्तम आर्जव धर्म का धारी, संयम भाव जगावे।।20।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरण माया रहितोत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संज्वलन होय उदय में माया, यथाख्यात ना पावे।
आर्जव धर्म का धारी होकर, केवल ज्ञान जगावे।।21।।

ॐ ह्रीं संज्वलन माया रहितोत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन पूजा में मायाचारी, करके स्वयं कराए।
मोक्ष मार्ग में कारण है वह, पुण्य जीव ना पाए।।22।।

ॐ ह्रीं जिन पूजादौ कृत माया रहितोत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी के पठन श्रवण में, मायाचार दिखावे।
आर्जव धर्म रहित हो भारी, कर्म बन्ध ही पावें।।23।।

ॐ ह्रीं जिनागमार्थादौ कृत माया रहितोत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वार्थ के वश हो ऋषि मुनियों में, भेद किया करवाया।
आर्जव धर्म जगा न मन में, मायाचार दिखाया।।24।।

ॐ ह्रीं गुरुवर सेवादौ कृत माया रहितोत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशय तीर्थ क्षेत्र की यात्रा, में की मायाचारी।
कुटिल भाव से किए बहाने, आर्जव धर्म निवारी।।25।।

ॐ ह्रीं तीर्थ क्षेत्रादौ कृत माया रहितोत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्ध क्षेत्र का किया बहाना, करके शैर कराए।
फिरे भटकते माया करके, आर्जव धर्म ना पाए।।26।।

ॐ ह्रीं सिद्ध क्षेत्रादौ कृत माया रहितोत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम शौच धर्म के अर्घ्य

(चाल छन्द)

चक्री पद में ललचाए, सब धर्म कर्म विसराए।
मन में सन्तोष जगाएँ, निज शौच धर्म प्रगटाएँ।।27।।

ॐ ह्रीं चक्रवर्ति पद सुखवाञ्छा रहितोत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नारायण पद के धारी, की मन में वाँछा भारी।
मन में सन्तोष जगाएँ, निज शौच धर्म प्रगटाएँ।।28।।

ॐ ह्रीं नारायण प्रतिनारायण पद सुखवाञ्छा रहितोत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

धन वैभव यश की भाई, मन में बहु आस लगाई।
मन में सन्तोष जगाएँ, निज शौच धर्म प्रगटाएँ।।29।।

ॐ ह्रीं धन वैभव यशवाञ्छा रहितोत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परलोक सौख्य की भारी, आकांक्षा की मनहारी।
मन में सन्तोष जगाएँ, निज शौच धर्म प्रगटाएँ।।30।।

ॐ ह्रीं परलौक सुखवाञ्छा रहितोत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचेन्द्रिय विषय कहाएँ, आशा जिनकी उपजाएँ।
मन में सन्तोष जगाएँ, निज शौच धर्म प्रगटाएँ।।31।।

ॐ ह्रीं पंचेन्द्रिय विषय भोगवाञ्छा रहितोत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वजन में राग बढ़ाए, हम उनसे ठगे ठगाए।
मन में सन्तोष जगाएँ, निज शौच धर्म प्रगटाएँ।।32।।

ॐ ह्रीं बन्धु बान्धव भमत्व रहितोत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन की इच्छा पाई, या मरण की मन में आई।
मन में सन्तोष जगाएँ, निज शौच धर्म प्रगटाएँ।।33।।

ॐ ह्रीं जीवन मरणाकांक्षा रहितोत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज देह सुखों की भाई, इच्छा बहु मन में पाई।
मन में सन्तोष जगाएँ, निज शौच धर्म प्रगटाएँ।।34।।

ॐ ह्रीं शरीर सुखवाञ्छा रहितोत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन मन धन की आशाएँ, जग के प्राणी सब पाएँ।
मन में सन्तोष जगाएँ, निज शौच धर्म प्रगटाएँ।।35।।

ॐ ह्रीं सर्वाशुचिता रहितोत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम सत्य धर्म के अर्घ्य

(चौपाई छन्द)

क्रोध भाव मन में जब आया, सत्य नहीं स्वीकार कराया।
क्रोध कषाय पूर्ण विनशाएँ, सत्य धर्म उर में प्रगटाएँ।।36।।

ॐ ह्रीं क्रोध कषाय रहितोत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ हृदय में जब आ जाए, सत्य धर्म ना प्राणी पाए।
लोभ कषाय पूर्ण विनशाएँ, सत्य धर्म उर में प्रगटाएँ।।37।।

ॐ ह्रीं लोभ कषाय रहितोत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसके हृदय में भय छा जाए, सत्य धर्म ना वह भी पाए।
भय को हम भी पूर्ण नशाएँ, सत्य धर्म उर में प्रगटाएँ।।38।।

ॐ ह्रीं भय नो कषाय रहितोत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हास्य उदय में जिसके आए, सत्य धर्म ना प्राणी पाए।
हास्य हृदय से पूर्ण विनशाए, सत्य धर्म उर में प्रगटाएँ।।39।।

ॐ ह्रीं हास्य नो कषाय रहितोत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य कही है आगमवाणी, जो है जग जन की कल्याणी।
अनुवीची भाषण हम पाएँ, सत्य धर्म उर में प्रगटाएँ।।40।।

ॐ ह्रीं अनुवीचित भाषण रहितोत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत् को कहकर असत् बताया, सत्य नहीं मन मेरे आया।
असत् प्रलाप पूर्ण विनसाएँ, सत्य धर्म उर में प्रगटाएँ।।41।।

ॐ ह्रीं सत प्रलाप रहितोत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

असत् वस्तु को सत् बतलाया, किन्तु सत्य का किया सफाया।
असत् उद्भावन पूर्ण नशाएँ, सत्य धर्म उर में प्रगटाएँ।।42।।

ॐ ह्रीं असदुद्भावन रहितोत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्य वस्तु का अन्य बताया, सत्य धर्म ना हमने पाया।
यह पर रूप कथन विनशाए, सत्य धर्म उर में प्रगटाएँ।।43।।

ॐ ह्रीं पररुप कथन रहितोत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्हित वचन बोलकर भाई, सत्य धर्म की करी सफाई।
गर्हित वचन पूर्ण विनसाएँ, सत्य धर्म उर में प्रगटाएँ।।44।।

ॐ ह्रीं गर्हित सावद्या प्रियवचन रहितोत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जनपदादि दश सत्य कहाए, जो व्यवहार में प्राणी लाए।
विशद सत्य जीवन में लाएँ, सत्य धर्म उर में प्रगटाएँ।।45।।

ॐ ह्रीं जनपदादि दशभेद सहितोत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम संयम धर्म के अर्घ्य

(दोहा)

किया पाप अर्जन सदा, हुए असंयम वान।
संयमधारी हम बनें, पाएँ पद निर्वाण।।46।।

ॐ ह्रीं असंयम रहितोत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सामायिक संयम धरें, पाएँ समताभाव।
मुक्ती पथ की निज हृदय, जगे सदा ही चाव।।47।।

ॐ ह्रीं सामायिक संयम सहितोत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छेदोपस्थापन किया, जगे शुभाशुभ भाव।
मुक्ती पथ की निज हृदय, जगे सदा ही चाव।।48।।

ॐ ह्रीं द्देदोपस्थापना संयम सहितोत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पापों का परिहार कर, परिहार विशुद्धी वान।
संयम धारी हो विशद, पाएँ शिव सोपान।।49।।

ॐ ह्रीं परिहार विशुद्धि संयम सहितोत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बादर सर्व कषाय का, करके प्रभु परिहार।
सूक्ष्म साम्पराय संयमी, पा होवें भव पार।।50।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्म साम्पराय संयम सहितोत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यथाख्यात संयम विशद, जग में रहा महान।
पाके शिव पथ पर चलें, पाए केवल ज्ञान।।51।।

ॐ ह्रीं यथाख्यात संयम सहितोत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय निज वश में करें, इन्द्रिय संयमवान।
होकर निज में हो रमण, करें आत्म का ध्यान।।52।।

ॐ ह्रीं इन्द्रिय संयम सहितोत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रस स्थावर जीव के, होके रक्षाकार।
संयम पालन हम करें, करने निज उद्धार।।53।।

ॐ ह्रीं त्रसजीव रक्षा सहित प्राणी सहितोत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन मर्कट वश में करें, होके संयमवान।
तभी होयगा जीव का, निज आतम कल्याण।।54।।

ॐ ह्रीं अनिन्द्रिय संयम सहितोत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम तप धर्म के अर्घ्य

(चाल छन्द)

ऋषि अनशन तप के धारी, होते भोजन परिहारी।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।55।।

ॐ ह्रीं अनशन तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छा से कम ऋषि खावें, वे ऊनोदरी कहावें।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।56।।

ॐ ह्रीं अवमौदर्य तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्रत परिसंख्यान जो पावें, गणना कर वस्तू खावें।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।57।।

ॐ ह्रीं वृति परिसंख्यान तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषि गाए रस परित्यागी, सम्यक् तप धर बड़भागी।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।58।।

ॐ ह्रीं रस परित्याग तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप विविक्त शैय्यासन पावें, वे समता भाव जगावें।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।59।।

ॐ ह्रीं विविक्त शय्यासन तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप काय क्लेश जो पावें, ना तन में राग लगावें।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।60।।

ॐ ह्रीं काय क्लेश तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रायश्चित्त सुतप ऋषि पावें, अपने सब दोष नशावें।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।61।।

ॐ ह्रीं प्रायश्चित तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषि विनय सुतप अपनावें, लघुता के भाव जगावें।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।62।।

ॐ ह्रीं विनय तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैय्यावृत्ती तप धारी, ऋषियों के कष्ट निवारी।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।63।।

ॐ ह्रीं वैय्यावृत्ती तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वाध्याय सुतप जो पावें, निज सम्यक् ज्ञान बढ़ावें।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।64।।

ॐ ह्रीं स्वाध्याय तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषि काय से राग घटावें, व्युत्सर्ग ध्यान शुभ पावें।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।65।।

ॐ ह्रीं व्युत्सर्ग तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आतम में रम जावें, ऋषि ध्यान सुतप प्रगटावें।
जो सम्यक् तप अपनाएँ, वे जगत पूज्यता पाएँ।।66।।

ॐ ह्रीं ध्यान तप युक्तोत्तम तपो धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम त्याग धर्म के अर्घ्य

(मोतियादाम छन्द)

करे बाह्य क्षेत्र वस्तु का त्याग, धर्म से है जिसको अनुराग।
प्राप्त करके वह शिव सोपान, करे जो विशद स्वपर कल्याण।।67।।

ॐ ह्रीं क्षेत्रवास्तु आदि बाह्य परिग्रह रहितोत्तम त्याग धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

रजत स्वर्णादिक का परिहार, बने शिव का राही अनगार।
प्राप्त करके वह शिव सोपान, करे जो विशद स्वपर कल्याण।।68।।

ॐ ह्रीं हिरण्य सुवर्णादि बाह्य परिग्रह रहितोत्तम त्याग धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

छोड़ धन धान्य आदि से राग, धार के मन में परम विराग।
प्राप्त करके वह शिव सोपान, करे जो विशद स्वपर कल्याण।।69।।

ॐ ह्रीं धन धान्यादि बाह्य परिग्रह रहितोत्तम त्याग धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दास दासी का छोड़े मोह, होय जो तन मन से निर्मोह।
प्राप्त करके वह शिव सोपान, करे जो विशद स्वपर कल्याण।।70।।

ॐ ह्रीं दासीदासादि बाह्य परिग्रह रहितोत्तम त्याग धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कुप्य भाण्डादिक की तज चाह, करे निज आतम में अवगाह।
प्राप्त करके वह शिव सोपान, करे जो विशद स्वपर कल्याण।।71।।

ॐ ह्रीं कुप्य भांडादिक बाह्य परिग्रह रहितोत्तम त्याग धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

परिग्रह चेतन स्वजन विशेष, राग उनसे भी तजे अशेष।
प्राप्त करके वह शिव सोपान, करे जो विशद स्वपर कल्याण।।72।।

ॐ ह्रीं चेतन परिग्रह रहितोत्तम त्याग धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

परिग्रह रहा अचेतन वान, तजे जो है पावन विद्वान।
प्राप्त करके वह शिव सोपान, करे जो विशद स्वपर कल्याण।।73।।

ॐ ह्रीं अचेतन परिग्रह रहितोत्तम त्याग धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

करें अघ राग द्वेष परिहार, नशाते मन के सर्व विकार।
प्राप्त करके वह शिव सोपान, करे जो विशद स्वपर कल्याण।।74।।

ॐ ह्रीं राग द्वेष रहितोत्तम त्याग धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

उत्तम आकिंचन धर्म के अर्घ्य

(वेसरी छन्द)

आठ विषय स्पर्श के गाए, विशद शुभाशुभ जो कहलाए।
उन विषयों में समता पाएँ, आकिञ्चन निज धर्म जगाएँ।।75।।

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रिय मनोज्ञामनोज्ञ विषय रहितोत्तम आकिंचन धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

पंच विषय रसना के जानो, रहे शुभाशुभ जो यह मानो।
उन विषयों में समता पाएँ, आकिञ्चन निज धर्म जगाएँ।।76।।

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रिय मनोज्ञामनोज्ञ विषय रहितोत्तम आकिंचन धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

घ्राणेन्द्रिय के विषय दो गाए, जो सुगन्ध दुर्गन्ध कहाए।
उन विषयों में समता पाएँ, आकिञ्चन निज धर्म जगाएँ।।77।।

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रिय मनोज्ञामनोज्ञ विषय रहितोत्तम आकिंचन धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

पंच वर्ण के भेद कहाए, चक्षू के जो विषय बताए।
उन विषयों में समता पाएँ, आकिञ्चन निज धर्म जगाएँ।।78।।

ॐ ह्रीं चक्षुरिन्द्रिय मनोज्ञामनोज्ञ विषय रहितोत्तम आकिंचन धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

शब्द शुभाशुभ जो भी गाए, कर्णेन्द्रिय के विषय बताए।
उन विषयों में समता पाएँ, आकिञ्चन निज धर्म जगाएँ।।79।।

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रिय मनोज्ञामनोज्ञ विषय रहितोत्तम आकिंचन धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

जन्म अकेला प्राणी पाए, मरके जीव अकेला जाए।
भाव एकत्व हृदय में आए, आकिञ्चन निज धर्म जगाए।।80।।

ॐ ह्रीं एकत्व भावना सहितोत्तम आकिंचन धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

भिन्न-भिन्न तन चेतन गाएँ, जड़ पदार्थ निज कैसे पाए।
ऐसा मन में भाव जगाएँ, आकिञ्चन निज धर्म जगाए।।81।।

ॐ ह्रीं सर्वपदार्थ ममत्व रहितोत्तम आकिंचन धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म के अर्घ्य

(मोतियादाम छन्द)

कथा स्त्री की राग बढ़ाय, मुक्त उससे भी जो हो जाय।
ब्रह्मचर्य धारी वह कहलाय, विशद वह मोक्ष महापद पाय।।82।।

ॐ ह्रीं स्त्रीराग कथा श्रवण रहितोत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

अंग स्त्री के जो मनहार, करे इसका भी जो परिहार।
ब्रह्मचर्य धारी वह कहलाय, विशद वह मोक्ष महापद पाय।।83।।

ॐ ह्रीं स्त्री मनोहरांग निरीक्षण रहितोत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

पूर्व में भोगे जो भी भोग, करे स्मृति का पूर्ण वियोग।
ब्रह्मचर्य धारी वह कहलाय, विशद वह मोक्ष महापद पाय।।84।।

ॐ ह्रीं पूर्वरतानुस्मरण रहितोत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

असन वृष इष्ट करे परिहार, संयमी मन में समताधार।
ब्रह्मचर्य धारी वह कहलाय, विशद वह मोक्ष महापद पाय।।85।।

ॐ ह्रीं वृष्येष्ट रस रहितोत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

करे ना निज तन का संस्कार, करे चेतन का स्वयं विचार।
ब्रह्मचर्य धारी वह कहलाय, विशद वह मोक्ष महापद पाय।।86।।

ॐ ह्रीं स्वशरीर संस्कार रहितोत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

काय स्पर्शादिक प्रविचार, करे इनका भी जो परिहार।
ब्रह्मचर्य धारी वह कहलाय, विशद वह मोक्ष महापद पाय।।87।।

ॐ ह्रीं काय स्पर्शरूप शब्द मनःप्रवीचार रहितोत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

रहे दश विध मैथुन से दूर, रहे चेतन रस में भरपूर।
ब्रह्मचर्य धारी वह कहलाय, विशद वह मोक्ष महापद पाय।।88।।

ॐ ह्रीं दस विध मैथुन रहितोत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

करे दश विध अब्रह्म परिहार, बने साधू पावन अनगार।
ब्रह्मचर्य धारी वह कहलाय, विशद वह मोक्ष महापद पाय।।89।।

ॐ ह्रीं दश विध अब्रह्म हेतु रहितोत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

ब्रह्मचर्य प्रतिपालक शुभकार, पंच हेतू करके परिहार।
ब्रह्मचर्य धारी वह कहलाय, विशद वह मोक्ष महापद पाय।।90।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्य प्रतिपालक पंच हेतु रहितोत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं नि.स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं (ज्ञानोदय छन्द)

उत्तम क्षमा आदि धर्मों के, धारी होते हैं अनगार।
मोक्षमार्ग के राही बनकर, करते पापों का परिहार।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा मार्दवार्जव शौच सत्य संयम तपस्त्यागाकिंचन्य ब्रह्मचर्य दशलक्षण धर्मेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य - ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दसलक्षण धर्मेभ्यो नमः।

समुच्चय जयमाला

दोहा - विशद कहे दश धर्म यह, शिव पद के सोपान।
भाव सहित जो भी चढ़ें, पावें पद निर्वाण।।

(चाल छन्द)

जो क्रोध करे अज्ञानी, वह स्वयं उठाए हानी।
जो मन में वैर जगाए, भव-भव में भ्रमण कराए।।1।।
है क्षमा धर्म शुभकारी, जीवों को मंगलकारी।
हो क्षमा धर्म का धारी, हो जाए शिव मगचारी।।2।।
इस जग में जो हैं मानी, वे कहलाएँ अज्ञानी।
जो निज को उच्च बताए, वह नीच गती को पाए।।3।।
हो मार्दव धर्म का धारी, सद् विनय शील मनहारी।
निज मृदु भावों को पाए, उत्तम गति में वह जाए।।4।।
जो करते मायाचारी, वे होंय भ्रष्ट आचारी।
वे कुटिल योग के धारी, दुख सहें जिन्दगी सारी।।5।।
जो आर्जव भाव जगाएँ, वे सरल भाव प्रगटाएँ।
हो आर्जव धर्म के धारी, सब राग द्वेष परिहारी।।6।।
मन में जो लोभ जगाते, वे कर्म बन्ध को पाते।
जो बाप पाप का गाया, जिसकी है दुखकर छाया।।7।।
हों शौच धर्म के धारी, पावन मुनिवर अनगारी।
मन में संतोष जगाएँ, वे शिवपुर धाम बनाएँ।।8।।

कह असत् वचन बकवादी, कटु बोले स्वयं प्रमादी।
जो बोलें वचन विवादी, दुख सहें बहुत उन्मादी।।9।।
जो सत्य धर्म को धारें, वे बोलें वचन विचारें।
हो सत्य धर्म का धारी, मुक्ती पथ का अधिकारी।।10।।
हो इन्द्रिय मन का रागी, अविरति धर्म का त्यागी।
जीवों का हिंसाकारी, होवे अविरति का धारी।।11।।
जो संयम भाव जगाए, वह संयम धर्म को पाए।
मन इन्द्रिय विजय कराए, शिव का राही बन जाए।।12।।
बाह्य अभ्यन्तर तप गाए, जो मन में लगन लगाए।
वह कर्म निर्जरा पाए, इस भव से मुक्ती पाए।।13।।
जो है उत्तम तप धारी, ऋषिवर पावन अनगारी।
वह केवल ज्ञान जगाए, फिर मोक्ष लक्ष्मी पाए।।14।।
है राग आग सम भाई, जीवों को बहु दुखदायी।
जो मन में राग जगाए, वह चिंता में जल पाए।।15।।
जो त्याग धर्म अपनाए, वह परम शांति को पाए।
वह अपने कर्म नशाए, निज चेतन में रम जाए।।16।।
जो किञ्चित राग लगाए, वह मोक्ष नहीं जा पाए।
वह बारम्बार भ्रमाए, अपना संसार बढ़ाए।।17।।
है धर्म आकिन्चन भाई, नित उभय लोक सुखदायी।
जो आकिन्चन को पाए, निश्चय शिव सुख प्रगटाए।।18।।
है भोग रोग सम भाई, जो उभय लोक दुखदायी।
तन मन को सदा लुभाए, भव कीच में सदा फसाए।।19।।
जो ब्रह्मचर्य अपनाए, वह निज गुण में रम जाए।
निज आतम धर्म जगाए, फिर मोक्ष महाफल पाए।।20।।
है धर्म की महिमा भारी, जो होते धर्म के धारी।
वे जग में पूजे जाते, फिर सिद्ध सदन को पाते।।21।।

दोहा - महिमा श्री जिन धर्म की, गाई अपरम्पार।
'विशद' धर्म को प्राप्त कर, पाएँ शिव का द्वार।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा मार्दवार्जव शौच सत्य संयम तपस्त्यागाकिंचन्य ब्रह्मचर्य दशलक्षण धर्मेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा - धारण कर दश धर्म शुभ, पाना शिव सोपान।
राही बन शिव के 'विशद', करना निज कल्याण।।

(इत्याशीर्वाद)

दशलक्षण भावना

तर्ज - यह भावना हमारी, प्रभु दर्श तेरे पाँऊ.....

उत्तम क्षमादि पावन, दश धर्म ये कहाएँ।
धारे हृदय जो अपने, वे जीव मोक्ष पाएँ।।
ये भावना, मेरी भावना-2।। टेक।।
है क्रोध दुःखदायी, अति बैर जो बढ़ाएँ।
यह भावना हमारी, उत्तम क्षमा को पाएँ-2।। ये भावना...।। 1।।
जो मान करें प्राणी, नीचा दिखाएँ सबको।
मार्दव धरम को पाके, मृदुता हृदय जगाएँ-2।। ये भावना...।। 2।।
जो करते मायाचारी, स्व पर के होते घाती।
आर्जव धरम के धारी, ऋजुता हृदय जगाएँ-2।। ये भावना...।। 3।।
जो लोभ के वशी हो, सुख चैन पर का हरते।
अब शौच धर्म धारें, सबको सुखी बनाएँ-2।। ये भावना...।। 4।।
करते असत् कथन जो, कटु बोलते वचन हैं।
हित-मित प्रिय वचन कह, अब सत्य धर्म पाएँ-2।। ये भावना...।। 5।।
जीवों के रक्षाकारी, इन्द्रिय विजय करें जो।
संयम के धारी होके, मुक्ती महल को जाएँ-2।। ये भावना...।। 6।।
क्षय कर्म करने हेतू, तप करते साधु पावन।
जो कर्म निर्जरा कर, आतम की शुद्धि पाएँ-2।। ये भावना...।। 7।।
संसार विषय भोगों, को पूर्ण रूप छोड़ें।
हो त्याग धर्म धारी, निज-चेतना को ध्याएँ-2।। ये भावना...।। 8।।
परिग्रह के भेद चौबिस, जो शास्त्र में बताए।
मुनि धर्म आकिन्चन जो, अपने हृदय सजाएँ-2।। ये भावना...।। 9।।
स्त्री से राग त्यागी, आतम में रमण करते।
ब्रह्मचर्य धर्म धारी, निज ज्ञान विशद पाएँ-2।। ये भावना...।। 10।।
दश धर्म धारते जो, वे जीव मोक्ष पाते।
ये सिद्ध शुद्ध होकर, शिव सौख्य 'विशद' पाएँ।। ये भावना...।। 11।।

दशलक्षण धर्म की जाप

समुच्चय जाप

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यः नमः।

1. ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्मांगाय नमः।
2. ॐ ह्रीं उत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः।
3. ॐ ह्रीं उत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः।
4. ॐ ह्रीं उत्तम शौच धर्मांगाय नमः।
5. ॐ ह्रीं उत्तम सत्य धर्मांगाय नमः।
6. ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्मांगाय नमः।
7. ॐ ह्रीं उत्तम तपो धर्मांगाय नमः।
8. ॐ ह्रीं उत्तम त्याग धर्मांगाय नमः।
9. ॐ ह्रीं उत्तमाकिंचन्य धर्मांगाय नमः।
10. ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः।

दश धर्मों की आरती

(तर्ज - इह विधि मंगल.....)

दश धर्मों की आरति कीजे, परम धरम धर के सुख लीजे।। टेक।।
प्रथम आरती क्षमा धरम की, मंगल मय शुभकार परम की।। 1।।
दूजी आरती मार्दव कारी, मद का दमन किए मनहारी।। 2।।
तीजी आरती आर्जव धारी, माया तजने से हो न्यारी।। 3।।
चौथी आरती शौच धरम की, लोभ त्याग जिन धर्म परम की।। 4।।
पाँचवीं आरती सच की कीजे, सत्य वचन हिरदय धर लीजे।। 5।।
छठी आरती संयम की है, इन्द्रिय दमन किए मुनि की है।। 6।।
सातवीं आरती सुतप की जानो, मोक्ष मार्ग का कारण मानो।। 7।।
आठवीं आरती त्याग की गाई, त्याग धर्म जानो सुखदायी।। 8।।
नौवीं आरती आकिंचन की, राग त्याग आतम चिन्तन की।। 9।।
दशवीं आरती ब्रह्मचर्य की, ब्रह्म स्वरूप 'विशद' जिनवर की।। 10।।
जो यह आरती मुख से गावे, उभय लोक में वह सुख पाये।। 11।।
दश धर्मों की आरति कीजे, परम धरम धर के सुख लीजे।। टेक।।

दशलक्षण धर्म भावना

शिव पद के सोपान, दश लक्षण शुभ धर्म हैं।
धारें जो गुणवान, वे पावें शिव पद विशद।।

तर्ज - मेरा अंतिम मरण समाधि तेरे दर पर.....

1. उत्तम क्षमा धर्म

दुर्जन प्राणी कभी सताए, उनने कष्ट दिया।
मन से वचन काय के द्वारा, जो प्रतिकार किया।।
इच्छित कार्य हुआ ना कोई, हमने क्रोध किया।
कर्मोदय से फल ना पाया, पर को दोष दिया।।
क्षमा भाव गुण रहा जीव का, उसको विसराए।
आतम का स्वभाव क्षमा है, नहीं जगा पाए।।
क्षमा धर्म को धारण करके, निज गुण को पाना।
मोक्षमार्ग की सीढ़ी चढ़कर, शिवपुर को जाना।।1।।

2. उत्तम मार्दव धर्म

पूजा ज्ञान जाति कुल ऋद्धी, तप बल देह कहे।
आठ अंग में मद ये आठों, बन्धन डाल रहे।।
वाणी के वाणों का सहना, बड़ा कठिन गाया।
मद के कारण नहीं जीव को, समकित गुण भाया।।
दर्श ज्ञान चारित्र सुतप शुभ, अरु उपचार कहे।
मार्दव धर्म के हेतु विनय के, भेद ये पंच रहे।।
मार्दव धर्म हृदय में अपने, हमे जगाना है।
मुक्ती का है हेतु विशद जो, हमको पाना है।।2।।

3. उत्तम आर्जव धर्म

मन से वचन काय के द्वारा, मायावी प्राणी।
तिर्यंचायू का आश्रव करते, कहती जिनवाणी।।
छल छद्रम करते हैं नित प्रति, कर मायाचारी।
ठगते हैं औरों को जिससे, होवें संसारी।।
जो मन में हो कहें वचन से, करें काय द्वारा।
उत्तम आर्जव धर्म कहा यह, जिनवर ने प्यारा।।

सरल हृदय के धारी प्राणी, आर्जव गुण पाएँ।
इस संसार भ्रमण को तजकर, सिद्ध सदन जाएँ।।3।।

4. उत्तम शौच धर्म

तृष्णा भाव जगे जीवन में, पाए जो माया।
लोभ पाप का बाप कहा है, आगम में गाया।।
खावे ना खर्चे धन प्राणी, जोड़-जोड़ धरते।
प्राण दाव पे लगा के धन की, रक्षा वे करते।।
मैल हाथ का धन यह गाये, शौच धर्मधारी।
मानें धन को पाकर के जो, होते अविकारी।।
शौच धर्म को पाने वाले, चेतन को ध्याते।
पाकर के चेतन की निधियाँ, सिद्ध दशा पाते।।4।।

5. उत्तम सत्य धर्म

रहा बोलबाला झूठे का, सत्य का मुँह काला।
इस कलिकाल में ठोकर खाए, सत्य धर्मवाला।।
राग-द्वेष से मोहित हैं जो, अज्ञानी प्राणी।
उभय लोक में निन्द्य कही है, दुखकर कटुवाणी।।
हित मित प्रिय वाणी है पावन, जग-जन हितकारी।
वचन कहे आगम अनुसारी, सत्य धर्मधारी।।
सत्य महाव्रत सत्य धर्म का, अविनाभावी है।
सत्य धर्म को पाने वाला, शुद्ध स्वभावी हैं।।5।।

6. उत्तम संयम धर्म

पंचेन्द्रिय मन को वश में जो, करते हैं जानो।
भू-जल अग्नी वायु वनस्पति, त्रस कायिक मानो।।
इनकी रक्षा करने वाले, संयम के धारी।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित धर, होते अनगारी।।
हिंसा झूठ चोरी कुशील अरु, परिग्रह के त्यागी।
पंच समितियाँ पालन करते, शिव के अनुरागी।।
संयम धर्म जगत् में पावन, कहा गया भाई!
जिसके द्वारा पाते प्राणी, जग में प्रभुताई।।6।।

7. उत्तम तप धर्म

अनशन तप ऊनोदर धारे, व्रत संख्यान कारी।
रस परित्याग विविक्त शैय्यासन, कायोत्सर्ग धारी।।
प्रायश्चित्त विनय सुतप जानो ये, वैय्यावृत्तकारी।
स्वाध्याय व्युत्सर्ग ध्यान रत, गाये शिवकारी।।
बाह्याभ्यन्तर तप ये द्वादश, आगम में गाए।
कर्म निर्जरा के हेतू यह, अनुपम कहलाए।।
तप से आतम कंचन कुन्दन, निर्मल हो भाई।
तप की महिमा विशद लोक में, जानो अतिशायी।।7।।

8. उत्तम त्याग धर्म

दान त्याग में कुछ समानता, शास्त्रों में गाई।
दान त्याग दोनों में फिर भी, भेद है अधिकायी।।
उत्तम पात्र को उत्तम वस्तू, दान में दी जाए।
आहारौषधि शास्त्र अभय ये, चउ विधि कहलाए।।
विषय कषायारम्भ परिग्रह, की ममता खोवें।
त्याग शुभाशुभ वस्तू के जो, परिहारी होवें।।
धन परिजन गृह वस्त्राभूषण, के होकर त्यागी।
मोक्ष मार्ग पर बढ़ने वाले, होते बड़भागी।।8।।

9. उत्तम आकिन्चन्य धर्म

क्षेत्र वास्तु सोना चाँदी धन, धान्य दास दासी।
कुप्य भाण्ड दश बाह्य परिग्रह, त्यागें वनवासी।।
मिथ्या क्रोध मान माया अरु, लोभ हास्यकारी।
शोक अरति रति ग्लानी भय त्रय, वेद के परिहारी।।
बाह्याभ्यन्तर परिग्रह के यह, चौबिस भेद कहे।
आकिन्चन व्रत धारी इनसे, विरहित पूर्ण रहे।।
कुछ भी किन्चित राग रहा ना, तन मन में भाई।
आकिन्चन शुभ धर्म के धारी, गाये शिवदायी।।9।।

10. उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म

कामदेव के वश में भाई, है यह जग सारा।
उसको वश में किया है जिसने, ब्रह्मचर्य धारा।।

कामी राग रोग से पीड़ित, खोजें नित नारी।
घृणित कार्य में रति करते हैं, होते लाचारी।।
कामदेव चक्री नृप ज्ञानी, ब्रह्मचर्य धारी।
पाते हैं जो सहस रानियाँ, तज हों अनगारी।।
आत्म ब्रह्म में रमन करें जो, निज आतम ध्याते।।
यह संसार असार छोड़कर, सिद्ध दशा पाते।।10।।

11. क्षमावाणी पर्व

पर्व क्षमावाणी का मिलकर, सभी मनाते हैं।
मन में हुई कलुषता कोई, उसे मिटाते हैं।।
करते क्षमा सभी जीवों को, वे सब क्षमा करें।
हुए दोष जाने अन्जाने, वे सब पूर्ण हरें।।
मैत्री भाव सभी जीवों से, मेरा नित्य रहे।
बैर नहीं हो किसी जीव से, प्रेम की धार बहे।।
जाने या अन्जाने हमसे, दोष हुए भारी।
'विशद' भाव से क्षमा करो सब, होके अविकारी।।11।।

दश धर्म भावना

दोहा –उत्तम क्षमादि धर्म दश, हैं शिव के सोपान।
भाते हम ये भावना, पाएँ पद निर्वाण।।

चौपाई

उत्तम क्षमा के धारी संत, करने चले कर्म का अंत।।1।।
उत्तम मार्दव धर ऋषिराज, तव अर्चा करते हम आज।।2।।
तजने वाले मायाचार उत्तम आर्जव धर अनगार।।3।।
तजने वाले लोभ कषाय, उत्तम शौच धारी ऋषिराय।।4।।
उत्तम सत्य धर्म को धार, बोलें आगम के अनुसार।।5।।
उत्तम संयम पालें आप, तजने वाले सारे पाप।।6।।
उत्तम तप धारी ऋषिराज, तव गुण गाए सकल समाज।।7।।
पाने वाले उत्तम त्याग, तन से भी त्यागें अनुराग।।8।।
उत्तम आकिन्चन को धार, पालें श्रेष्ठ आप आचार।।9।।
सब कुशील के त्यागें कर्म, धारे ब्रह्मचर्य शुभ धर्म।।10।।

दोहा – धर्म भावना यह विशद, भावें जो भवि जीव।
मोक्ष प्रदायक भव्य वे, पावें पुण्य अतीव।।

दशलक्षण धर्म विधानं (संस्कृत)

"माण्डला"

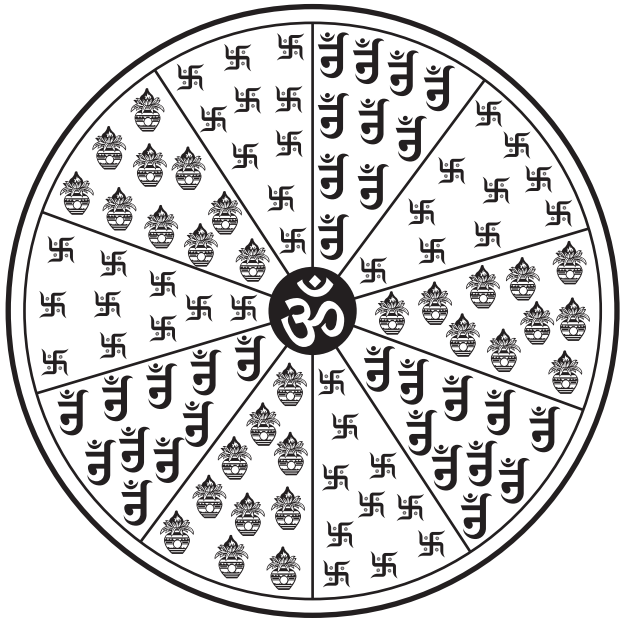

बीच में - ॐ
प्रथम कोष्ठ - 10
द्वितीय कोष्ठ - 10
तृतिय कोष्ठ - 10
चतुर्थ कोष्ठ - 10
पंचम कोष्ठ - 10
षष्ठम् कोष्ठ - 10
सप्तम कोष्ठ - 10
अष्ट कोष्ठ - 10
नवम कोष्ठ - 10
दशम कोष्ठ - 10
कुल - 100 अर्घ्य

समन्वयक :

आचार्य श्री विशदसागर जी महाराज

दशलाक्षणिकव्रतोद्यापनम् पूजा

(मालिनी छन्दः)

विमलगुण समृद्धं ज्ञानविज्ञान शुद्धं, अभयवन समुद्रं चिन्मयूखप्रचण्डं।
व्रतदश विध धारं संयजे श्रीविपारं, प्रथमजिनविदक्षं सद्व्रताढ्यं जिनेशम्।।1।।

दशलक्षणकं सारं, व्रतं सद्व्रत-मुत्तमम्।
प्रसंक्षेपोद्यापनं वक्ष्ये, यथाजातं जिनेश्वरात्।।2।।

आदौ गर्भगृहे पूजा, क्रियते सद्बुधोत्तमैः।
जिननामावलिं शुद्धां, सकलीकरणादिकं।।3।।

सन्मंडपप्रतिष्ठां च, पट्यते पण्डितोत्तमैः।
नानाशास्त्रान्वितैः धीरैः, कलागुणविराजितैः।।4।।

शतकमलसमूहं वर्तुलाकार चक्रं, भवशतभजनाशं सर्वमोक्षप्रचक्रं।
परमगुणनिधानं सद्व्रतौघप्रधानं, विविधकुसुमवृन्दैः शुद्धयंत्रं क्षिपामि।।5।।

ॐ ह्रीं भाविक सद्य सानिध्य शत कमलोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

॥ स्तोत्रं ॥ (अनुष्टुप छन्द)

सुव्रताय नमो लोके, दशधाय जिनोदिते।
व्रतेशिने गुणौघाय, मोक्षसाधन हेतवे।।1।।
उत्तमक्षमाधीशाय, मार्दवांगाय नमोनमः।
आर्जवांगाय महांगाय, जिनाधीश प्रमोदिते।।2।।
शुशौचाय गुणौघाय, विविधर्द्धि प्रदायिने।
प्रसत्याय सुदान्ताय, षट्खंड पद दायिने।।3।।
संयमाय दयांगाय, पाप ताप विनाशिने।
कायक्लेश प्रयुक्ताय, द्विषद्भेद प्रकाशिने।।4।।
महात्याग प्रयुक्ताय, सदंगाय नमोनमः।
लसद्गुण समूहाय, पापध्वंसन हेतवे।।5।।
सर्वसंग विमुक्ताय, स्वाकिंचन्यपरात्मने।
विश्वसौख्य प्रदानाय, नमः स्वर्गप्रदायिने।।6।।
ब्रह्मचर्याय स्वांगाय, विश्वधर्म गुणेशिने।
प्रभव-मारध्वंसाय, दशधर्म प्रकाशिने।।7।।

महादुःख प्रहंतारं, मुक्ति संग-मकारिणं।
स्थापयामि वृषाधीशं, चक्रवर्तिपुराकृतं।।8।।
अकलंकं गुणभद्रं, समन्तभद्रं परं तु जिनचंद्रं।
विद्यानन्दि मुनीन्द्रं, सुमतिसमुद्रं जिनं नौमि।।9।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिकाग्रेपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

दशलक्षण धर्म पूजां

स्थापना (मालनी छन्द)

अर्हंत-मीश-मनवद्य-मनन्त बोध-
मक्रोध-मान-मनसं शिरसा प्रणम्य।
आह्वाननं स्थिति समीप कृतादि पूर्वं,
धर्मं शिवाय दशलाक्षणिकं यजामि।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्धृतदशलाक्षणिकधर्म अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)।
अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

(बसन्ततिलका छन्द)

सोमोद्भवां सुरसरित् प्रमुख श्रवन्तीं
पद्मादि निर्मल सरः शुचि वारि धारां।
सारां तुषार किरणायमुहुर्-ददेऽहं
धर्माय शर्मनिधये दशलक्षणाय।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख समुद्धृताय दशलाक्षणिकधर्माय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीचंदनेन कृमिजग्ध युतेन चन्द्र
मिश्रेण सारतर-लोहित-चन्दनेन।
भू विभ्रम-भ्रमर भार भरेण भक्त्या
धर्मं सुखाय दशलक्षण-मर्चयामि।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख समुद्धृताय दशलाक्षणिकधर्माय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्य प्ररोह निवहै-रिव शुक्ल सारैः
स्फार स्फुरित्-परिमलै-रिव कुन्दवृन्दैः।
शाल्यक्ष-ताक्षत चयैर्-दशधा जिनोक्तं
धर्मं विमुक्ति पद शर्म कृतेऽर्चयामि।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख समुद्धृताय दशलाक्षणिकधर्माय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सच्छीत पुष्प सुभगैः सुमनःसुगन्धैः
सत्केतकी सुरभि गंधयुत प्रधानैः।

पद्मोत्पलादिभि-रपि प्रवर प्रसूनैः
श्रीजिनधर्ममद्य भर्मभिदं भजामि।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख समुद्धृताय दशलाक्षणिकधर्माय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सोमालिका सघृतफेनक स्वाद खाद्यैः
सन्मोदकैर्-वटकभंडकघार्तपूरैः।
अन्यै-रनेक-रचनैश्-चरुभिर्-जिनोक्तं
सूक्ताऽमृतै-रिव वृषं मधुरैर्-महामि।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख समुद्धृताय दशलाक्षणिकधर्माय चरुं निर्वपामीति स्वाहा।

हैयंगवीन हिम रश्मि सुगंधतैल
माणिक्य मण्यरुचि भूरितर प्रदीपैः।
मिथ्या कुबोध कुचरित्र तमो-विनाशं
धर्मं यजे जग-दनिंद्य पदेऽर्चयामि।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख समुद्धृताय दशलाक्षणिकधर्माय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

गोशीर्षकृमिजसुगंध सुरेन्द्र दारु
कर्पूर यावन लवंग जटादि मिश्रं।
धूपं ददामि मदनारि विनाश हेतोः
धर्माय कर्म करिकेसरिणे शुभाप्त्यै।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख समुद्धृताय दशलाक्षणिकधर्माय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीमत्-कपित्थ करक क्रमुकाम्र जंबु
जंबीर कंटकी फलोत्तम नालिकेरैः।
कुष्माण्ड-काम्र कदली वर बीजपूरैः
संपूजयामि जिनधर्ममनल्पसिद्धैः।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख समुद्धृताय दशलाक्षणिकधर्माय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल कमल गन्धैस्-तन्दुलैः पाण्डुखण्डैः
प्रसवचरुभि-रुच्चैर्-दीपधूप प्रसूनैः।
अथकुत (थ) शत ? पर्व स्वस्ति काद्यैर्-ददेऽहं
रचित मुचित-मस्मै जैनधर्माय वाऽर्घं।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख समुद्धृताय दशलाक्षणिकधर्माय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला

(घत्ता-छन्दः)

धम्माऽलयसारं, लक्खणभारं, दहलक्खण लक्खण सहियं।
दह दिणसुहकारण णाम वियारं, अक्खमि जह जिणवर कहियं।।1।।

पंचमीदिण जिणणाम सुकहियं, सुज्ज किरण उत्तम खम सहियं।
छट्ठिदिणचंद किरणगुण भरियं, मद्दव सहिय सुपोसह-महियं।।2।।
सत्तमि दिण-मणिकिरण विसालं, अज्जव सहपण सुहुसह भालं।
अट्ठमि धम्म रयण गुणमालं, सव्वसयाण लहियं जगपालं।।3।।
णममी वोहरयण पुज्जिजह सौच संगसिरि जिनवर गिज्जई।
दहमी अभय रयण जाणिज्जइ, संयम सहिय जिणिंद भणिज्जइ।।4।।
एकादहि मणिकुण्डल णिम्मल, परतव सहकिज्जइ तप विमल।
वारसि चिंता रयण समुज्जल, दाण सुपत्तहं दिज्जइ सुहजल।।5।।
तेरसि लोय तिलय महिमायर, आकिंचणगुण सहियं गुणभर।
चौदसि बंभ तिलय-महि मणोहर, बंभचेरगुण भरिओ सुहकर।।6।।
णाम सहिय सुदिण दह लक्खण, पुव्वं किय भरहेण सुलक्खण।
बाहुबलेण सुकीय विचक्षण, सिरिजयकुँवर लहिय फल दक्खण।।7।।
महाबल लोहजंग वयधारी, रयणं गदरथ णप्पहकारी।
अजितं जय जय विजय मणोहर, ललियंगउ वज्जंगउ वधकर।।8।।
चिंतागइ ण होइ मणोगइ, अमितगइ तह कियउ चपलगइ।
मणोवेग वय धरिउ चपलगइ, विज्जकुमर चितंगकुमरवइ।।9।।
भाण सुभा ण किय उवयमुत्तम, पयापाल महीपाल सुसत्तम।
कियउ अणंतपाल पुरुसोत्तम, धणवइ धणपालेण मणोत्तम।।10।।
भविसकुमर सिरिकुमर सुसारं, वज्जकुमर श्रीपाल सुधारं।
कंठ - सुकंठ णरिंदं भारं, घोस सुघोस गमा वयपारं।।11।।
एवं णर - णारी वय सुंदर, पव्विकिय गय मोक्खसुमंदिर।
कहिय जिणिंद दिव्यधुणि मंदिर, भविय सणाय लहइ सोमंदिर।।12।।
जे णर-णारि भणइ जयमाला, लहु ते पावइ सुह परिमाला।
मुक्ति रमणि गल कंदल माला, णासइ भव-भय दुक्खह माला।।13।।
अभय चंद मुणि जय मणोहारा। वंदति अभयनन्दि जयकारा।।
धम्म 'विशद' भव तारण हारा, भविजण बोल्ताह जयजयकारा।।14।।

(घत्ता छन्द)

वंदित सुरसागर, मुणिमय सागर, सागरसुक्ख तरंगभर।
सिरि सुमह सुसागर, जिणगुणसागर, सागरकेवल परमपद (र)।।

ॐ ह्रीं दशलाक्षणिकधर्माय धर्मेभ्योऽर्घं: निर्वपामीति स्वाहा।

इत्येवं जयमाला हिं, दशलक्षण संभवा।
भव्यानां लोक संघस्थ, विशदं सौख्य कारणं।।

इत्याशीर्वाद:

अथ प्रथम–क्षमाधर्मांगाय पूजा

स्थापना

कोपादि रहितं श्रेष्ठं, सर्व सौख्याकरां क्षमाम्।
पूजया विशदं भक्त्या, पूजयामि तदाप्तये।।

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमाधर्मांगाय अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठ: तिष्ठ: ठ: ठ: (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

मसुरी दश महीकाय-रक्षणे शुद्धमानस:।
सचित्तधरण्यां पादं, न ददात्यर्चते सदा।।1।।

ॐ ह्रीं सप्तलक्षमहाकाय रक्षणोत्तम क्षमाधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वजीव हितागारं, मुनीन्द्रं गुणशालिनं।
क्षमा सद्धर्म गेहं वा, चर्चे वीत परिग्रहं।।2।।

ॐ ह्रीं सर्वजीव रक्षणोत्तम क्षमाधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंबुबिन्दु समं गात्रं, जलकाय सुरक्षकं।
वसुद्रव्य परै: शुद्धै:, संयजामि दमीश्वरं।।3।।

ॐ ह्रीं जलकाय रक्षणोत्तम क्षमाधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूचिकाग्र समं कायं, वह्निजीव सुरक्षकं।
महासिद्धान्त वेत्तारं, संयजे ऋषिपं मुदा।।4।।

ॐ ह्रीं अग्निजीव रक्षणोत्तम क्षमाधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वजा काय समं देहं, वात काय सुरक्षकं।
ज्ञानविज्ञान वाराशिं, महामि यतिनायकं।।5।।

ॐ ह्रीं वातकाय रक्षणोत्तम क्षमाधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनेक वृक्षजीवानां, दशलक्ष विशारदं।
अनेक काय जीवानां, वै पालकं तं यजाम्यहं।।6।।

ॐ ह्रीं वनस्पतिकाय रक्षणोत्तम क्षमाधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नित्य निकोत जीवानां-मेक रज्जु प्रपालकं।
तं क्षमागारकं चर्चे, जलचंदन तंदुलै:।।7।।

ॐ ह्रीं नित्यनिकोत रक्षणोत्तम क्षमाधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इतर निकोतज्जीव, समूह प्रतिपालकं।
मुनीन्द्रं गुणवाराशिं, पूजयामि दमीश्वरं।।8।।

ॐ ह्रीं इतरनिकोतभवजीव रक्षणोत्तम क्षमाधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विकलेन्द्रिय त्रयो भेदं, जीव राशि प्रपालकं।
स्वंभः चन्दनशालीयैः, महामि भवघातकं।।9।।

ॐ ह्रीं विकलेन्द्रियत्रयभेदजीव रक्षणोत्तम क्षमाधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

गर्भोद्भव जीवानां, पालकं सु यतीश्वरं।
पंचेन्द्रिय प्रतान्तं वा, रक्षकं प्रयजे सदा।।10।।

ॐ ह्रीं पंचेन्द्रियजीव रक्षणोत्तम क्षमाधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलचंदन शालीयैः, पुष्प नैवेद्य दीपकैः।
धूप फलभरैश्-चाये, प्रथमांगं क्षमाधिकं।।11।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ द्वितिय–मार्दवधर्मांगाय पूजा

त्यक्तमानं सुखागारं, मार्दवं क्रिययान्वितं।
पूजया परया भक्त्या, आह्वानादि विधानतः।।

ॐ ह्रीं उत्तम मार्दवधर्मांगाय अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

पाप गर्व प्रहंतारं, राग द्वेष विनाशकं।
मार्दव गुणसंयुक्तं, पूजयामि गुणोत्करं।।1।।

ॐ ह्रीं मार्दवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जातिगर्वं प्रहंतारं, दुःखदं सौख्यदूरगं।
गर्व नाशकरं साधुं, पूजयामि जलादिकैः।।2।।

ॐ ह्रीं जातिगर्वरहित मार्दवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपगर्वं न जानाति, वैराग्य सहितो महान्।
महा ध्यानयुतो नित्यं, मह्यतेऽसौ विशारदः।।3।।

ॐ ह्रीं रूपगर्व रहित मार्दवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुलगर्व विधातारं, मुनिलोक प्रबोधकं।
धर्मध्यानरतं नित्यं, यजामि गुणशालिनं।।4।।

ॐ ह्रीं कुलगर्व रहित मार्दवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान गर्व विजेतारं, मुनिं वीत परिग्रहं।
चित्स्वरूपं चिदानंदं, यजेऽहं जलमोदकैः।।5।।

ॐ ह्रीं ज्ञानगर्व रहित मार्दवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बलमद बलार्जितं, लोकोद्धार समर्थकं।
वीतमत्सरकं चर्चे, ध्यानगम्यं मुनिं सदा।।6।।

ॐ ह्रीं बलमद रहित मार्दवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पक्षादि तपसा युक्तो, गर्वं न कुरुते कदा।
भुवन गन्ध शालीयैः, पूज्यते गुरुसप्तमः।।7।।

ॐ ह्रीं तपगर्व रहित मार्दवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भामापुत्र सुबन्धूनां, महागर्व विनाशकं।
स्वंभ चंदन शालीयैः, पूजयामि ऋषिं परं।।8।।

ॐ ह्रीं भामापुत्रादिगर्व रहित मार्दवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धन धान्य सुवस्तूनाम्, ममता भाव दूरगं।
संसार तारकं देयं, महामि सुतपोनिधिं।।9।।

ॐ ह्रीं धनधान्यगर्व रहित मार्दवधर्मांग जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गो महिषी गजाऽश्वानां, पाप गर्व विदूरगं।
मुनि सुमृदुतायुक्तं, महामि जलमोदकैः।।10।।

ॐ ह्रीं चतुष्पदादिगर्व रहित मार्दवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलगंधादिकैः पुष्पैः, दीप धूप फलोत्तमैः।
मार्दवांग वरं चर्चे, शुद्ध धर्मोपदेशकं।।

ॐ ह्रीं मार्दवधर्मांगाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ तृतिय–आर्जवधर्मांगाय पूजा

स्थापयामि परमांगं, धर्महेतु विवर्धकं।
शासनोद्योतकं चर्चे, वीतरागं सुवल्लभं।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तम आर्जवधर्मांगाय अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

मनसि कुटिलतां यो, न करोति कदा मुनिः।
विशुद्ध हृदयं देवं, महामि यतिनायकं।।1।।

ॐ ह्रीं मनसि कुटिलता रहित आर्जवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य वाक्य युतं धीरं, सत्योपदेश दायकं।
दुःख दारिद्रहं तारं, यजे साधुं निरंतरं।।2।।

ॐ ह्रीं सत्यवाक्य युक्ताय आर्जवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

असत्ये च महादुःख, दायके न रतो मुनिः।
चर्च्यतेऽसौ परावेत्ता, जिनशासन रक्षकः।।3।।

ॐ ह्रीं असत्यकार्य रहित आर्जवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्याऽसत्य द्वयं कार्यं, हिताऽहित विचारकः।
परहितचिंतकोऽसौ, मह्यते गुणसागरः।।4।।

ॐ ह्रीं उभयकार्यं विचार सहितार्जवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रि करण योगधरं, युधिष्ठरमिव वै मुनिं।
परोपसर्ग जेत्तारं, पूजयामि शिवंकरं।।5।।

ॐ ह्रीं परोपसर्ग सहनार्जवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनीन्द्रं गुणवाराशिं, कुमिथ्या मत खण्डकं।
क्षुत्पिपासा सहं धीरं, संयजामि दयाधिकं।।6।।

ॐ ह्रीं परिषह सहनार्जवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हित मित मधुर श्रेष्ठं, वाक्य संसार तारकं।
सदुपदेशकं साधुं, चर्चे तं धर्मनायकं।।7।।

ॐ ह्रीं मधुरोपदेशार्जवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीतराग महाध्यान, धारकं चित्त वारकं।
ऋजुपरिणा-मागारं, तं महामि यतीश्वरं।।8।।

ॐ ह्रीं ऋजुपरिणामार्जवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षडावश्यक संधारं चिद्रूपं ध्यान तत्परं।
कायोत्सर्ग महायोगं, धारकं त यजे मुदा।।9।।

ॐ ह्रीं षडावश्यकार्जवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्र वाक्यादि्-विरक्तं हि, प्रमाण नय देशकं।
कामस्य मद हंतारं, भावयामि यतीश्वरं।।10।।

ॐ ह्रीं वक्र वचनरहितार्जवधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वनचंदन शालीयैः, लतांत चरु दीपकैः।
धूप फल भरैश्चाये, आर्जवं सुधर्मोदधिं।।11।।

ॐ ह्रीं आर्जवधर्मांगाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ चतुर्थ–शौचधर्मांगाय पूजा

विश्व जीव हितागारं, शौचांगं सुख मोक्षदं।
स्थापयामि त्रिवारं तं, पूजयामि पृथक् पृथक्।।

ॐ ह्रीं उत्तम शौचधर्मांगाय अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

धर्म प्रतीति शौचांगं, भव्य जीव हितावहं।
पालकं सुमुनिं चाये, धर्मदेशन तत्परं।।1।।

ॐ ह्रीं धर्मप्रतीतिशौचधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वाक्यशौचं परं प्रोक्तं, श्रीजिनेन्द्र स्तवादिकं।
मनः शौचं विधातारं, यजेऽहं मुनिधर्मदं।।2।।

ॐ ह्रीं पवित्रवाक्य शौचधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चारित्र परं साधुं, श्री शौचांग विनायकं।
वन गन्धाक्षतैश्-चर्चे, वीतमोहं विशारदं।।3।।

ॐ ह्रीं चारित्रस्नान शौचधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तरात्म महाभेद, भेदक-मघ छेदकं।
शौचांगस्य धरधीरं, तं यजामि गुणोदधिं।।4।।

ॐ ह्रीं आत्मध्यान शौचधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुप्तिगोपन शौचांग, धारकं भव तारकं।
महामि तत्त्ववेत्तारं, महाधर्म विधायकं।।5।।

ॐ ह्रीं गुप्तित्रयरक्षण शौचधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधोत्पत्ति निहंत्तारं, वीतरागं महामुनिं।
यजामि कामहंतारं, जलचंदन साक्षतैः।।6।।

ॐ ह्रीं क्रोधादि रहित शौचधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्योपदेश कर्त्तारं, सर्वजीव हितेशिनं।
जलाद्यष्ट महाद्रव्यैः, महामि जयदं परं।।7।।

ॐ ह्रीं जिनचैत्योपदेश शौचधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचाचार विचारज्ञं श्रीमुनिं शौच धारकं।
समित्यादि व्रत स्नान, धारकं तं यजे मुदा।।8।।

ॐ ह्रीं व्रतमित्यादि शौचधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यवहार शौच संधारं, जिनपूजा करं परं।
स्वर्गादि गतिदं सारं, तं महाम्यघ घातकं।।9।।

ॐ ह्रीं जिनपूजोपदेश शौचधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर ब्रह्मजपारंगं, जिन शासन पोषकं।
इहाशौचधरं देवं, संयजामि जलादिकैः।।10।।

ॐ ह्रीं परब्रह्मजपादि शौचधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चर्मास्थिमांस चांडाल, मृतस्पर्शात्-सुनिर्मलः।
विष्टास्पर्शाज्-जल, स्नान माचरेन्-महामुनिः।।

ॐ ह्रीं शौचधर्मांगाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ पंचम–सत्यधर्मांगाय पूजा

स्थापयामि सदा चित्ते, सत्य धर्धांगकं मुदा।
धर्म सिद्धि करं लोके, सर्वकल्याण कारकम्।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्यधर्मांगाय अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

सत्य शील गुणाधारं, स्पष्ट संख्या विवेदकं।
चर्चामि वरपानीयैः, श्रीमुनिं मदहिंसकं।।1।।

ॐ ह्रीं सिद्धगुणोद्धारकसत्यधर्मांग जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनेन्द्र वचनाधारं, वेद वेदांग पारगं।
प्रसत्यांग विधातारं, पूजयामि महामुनिं।।2।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रवचनधृत सत्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादशांग श्रुताधारं, जिन संघ प्रबोधकं।
प्रसत्यांग सुधाब्धिं वा, तं महामि यतीश्वरं।।3।।

ॐ ह्रीं द्वादशांगश्रुत सत्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महासाधुं गुणोपेतं सद्ध्यान निरतं सदा।
जलचन्दन शालीयैश्-चर्चेहं श्रीमुनिंपरं।।4।।

ॐ ह्रीं साधुगुणरत सत्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्यव्रत धरं साधुं, पाप ताप निवारकं।
सत्य क्रिया दयाधारं, सुमुनि पूजयाम्यहम्।।5।।

ॐ ह्रीं व्रतक्रियायुक्त सत्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य पंच महामेरुं, भेदज्ञान प्रकाशकं।
सत्यधर्म गुणाधारं, पूजयामि गणाधिपं।।6।।

ॐ ह्रीं मेरुपृथ्वी सत्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टभूमि जिनेन्द्रोक्तं, भेदभाव प्रभावकं।
सुमुनिर्-महयते नित्य-मम्भचंदनस्वक्षतैः।।7।।

ॐ ह्रीं अष्टभूमिज्ञान सत्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्दश गुणस्थान, सत्य भाव विचारकं।
यजामि मुनिपं धीरं, शुद्ध बुद्धि प्रदायकं।।8।।

ॐ ह्रीं सत्यसिद्धान्त सत्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनदेवे जिनगुरौ, जिनसूत्रे विशारदः।
जिनवृषे महाज्ञानी, भाष्यते मुनिपुंगवः।।9।।

ॐ ह्रीं गुरुप्रतीति सत्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्वप्रतीतिसत्यांगं, कामध्वंसन कोविदं।
यथाख्यात चरित्राढ्यं, पूजयामि जलादिकैः।।10।।

ॐ ह्रीं यथाख्यात चारित्र सत्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मं देवगुरुं दयाप्रहसितं बोधं जिनेन्द्रोदितं।
त्रैलोक्यं सकलं सुदेव विततं चारित्र रत्नं महत्।।
सत्यं द्रव्य सुतत्त्व बोध निचयं सत्यं विना चान्यथा।
सत्यं श्रीजिनदेव भाषितवरं चार्घं ददे भावतः।।

ॐ ह्रीं सत्यधर्मांगाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ षष्ठ–संयमधर्मांगाय पूजा

दयाढ्यं संयमं चोक्तं, सुंदर-मिन्द्रियातिगं।
पूजया-परया भक्त्या, पूजयामि तदाप्तये।।

ॐ ह्रीं उत्तम संयमधर्मांगाय अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

एकेन्द्रिया पराजीवा, द्विपंचाशत्-प्रमाणकाः।
लक्ष्यसंख्या दयागारं, संयजामि दशाधिकं।।1।।

ॐ ह्रीं एकेन्द्रिय रक्षण संयमधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीन्द्रियादि पराजीवा, लक्ष्यद्वय-प्रपालकं।
स्वात्मवत्-सुविभेदज्ञं, तं यजाम्यभयान्वितं।।2।।

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रिय रक्षण संयमधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रीन्द्रियरक्षकं साधुं, लक्ष्यद्वय प्रपालकं।
यजामि संयमनिधिं, जलादि वसु द्रव्यकैः।।3।।

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियजाति रक्षण संयमधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुरिन्द्रिय जीवौघ, रक्षकं वनवासिनं।
लक्ष्य द्वय विचारज्ञं, यजामि भव्यबांधवं।।4।।

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियजाति रक्षण संयमधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचेन्द्रिय बहुभेद, दायकं मुनि नायकं।
जल नभ भूमि भेदज्ञं, पूजयामि शमोदधिं।।5।।

ॐ ह्रीं पंचेन्द्रियजाति रक्षण संयमधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्पर्शन विषयातीतं, योग भाव विचारकं।
नग्नरूपं परं साधुं, महामि भव भेदकं।।6।।

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियविषय रक्षण संयमधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रसनेन्द्रिय वंचक, ज्ञान ध्यानविपारगं।
यजामि संयमागारं, जल गंध सुतन्दुलैः।।7।।

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रिय विषय रहित संयमधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घ्राणेन्द्रिय रक्षकं वै, विषय विष नाशकं।
संयमागारकं चर्चे, जिनधर्म विवर्द्धकं।।8।।

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रिय विषय रहित संयमधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेत्रेन्द्रिय रक्षकं सूरं, भामासंग विवर्जितं।
शीलाऽशील विचारज्ञं, चर्चे शील सरित्-पतिं।।9।।

ॐ ह्रीं नेत्रेन्द्रिय विषय रहित संयमधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्णेन्द्रिय साधकं धीरं, सुस्वरादि विवर्जितं।
वर योगगृहं चाये, स्वष्टभेदविधार्चनैः।।10।।

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रिय विषय रहित संयमधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गाथा-सयमसूरं यतीन्द्र, ज्ञानाब्धिं धर्मदं परं।
साधु जलचंदनशालियै, पुष्पौधैः पूजयामि दयाधारं।।

ॐ ह्रीं उत्तम संयमधर्मांगाय महार्घं निर्वापामीति स्वाहा।

अथ सप्तम–तपधर्मांगाय पूजा

कामेन्द्रिय दमं सारं, तपःकर्मारि नाशनं।
पूजया-परया भक्त्या, पूजयामि तदाप्तये।।

ॐ ह्रीं उत्तम तपधर्मांगाय अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

अष्टमी प्रोषधागारं, वसु कर्म विनाशकं।
सुरनरैः सदा पूज्यं, महामि जल द्रव्यकैः।।1।।

ॐ ह्रीं अष्टमी प्रोषधोतपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्दशी दमयुक्तं, परकष्ट निवारकं।
महामि तं नृपाराध्यं, वसुद्रव्य समूहकैः।।2।।

ॐ ह्रीं चतुर्दशी प्रोषधतपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचमी प्रोषधागारं, केवलज्ञान भावदं।
महामि यतिपं धीरं, वनचंदन पावनैः।।3।।

ॐ ह्रीं पंचमी प्रोषधतपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकांतर तपोगारं, वध बंधन भंजकं।
महामि व्रतसंधारं, पराऽतीचार वर्जितं।।4।।

ॐ ह्रीं एकांतरकृततपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वयन्तरादि तपाधारं, परदेशन तत्परं।
जयदं जायते पूतं, वीतमोहं महीतले।।5।।

ॐ ह्रीं द्विदिनानन्तर तपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पक्षप्रोषध कर्त्तारं, शुभतत्त्व विधायकं।
पूजयामि महाद्रव्यैः, भावदं च विदांवरं।।6।।

ॐ ह्रीं पक्षप्रोषध तपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्षोपवासिनं वीरं कायोत्सर्ग धृतं वरं।
वृषभेशं जिनं चाये, चादि धर्म प्रकाशकं।।7।।

ॐ ह्रीं वर्षोपवास तपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाहुबलिमुनिं चाये, कायोत्सर्ग धरं परं।
वर्षोपवासिनं धीरं, पापनाशन शुद्धिदं।।8।।

ॐ ह्रीं बाहुबलि वर्षोपवास तपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अहोरात्रि श्रुताभ्यास, करं ध्यान विपारगं।
चर्चामि बोधकूपारं, स्वष्ट द्रव्य समुच्चयैः।।9।।

ॐ ह्रीं ज्ञानाभ्यास तपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनो वाक्कायवश्यार्थं, धर्मध्यानपरायणं।
पूजयामि महाभाग, मनेकान्त दिगम्बरं।।10।।

ॐ ह्रीं त्रिकरण शुद्धि तपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मह तपोगृहं साधु, मम्भचन्दन साक्षतैः।
लतांतचरु दीपोघैः, चाये कामरिपुं परं।।11।।

ॐ ह्रीं उत्तम तपधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ अष्टम–त्यागधर्मांगाय पूजा

श्रीमन्-नाभि सुतं नत्वा, त्यागं सर्वसुखाकरं।
पूजयामि महाभागं, तमेकान्त दिगम्बरं।।

ॐ ह्रीं उत्तम त्यागधर्मांगाय अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

चतुर्विधं जिनेद्रोक्तं, दान लक्षणसंयुतं।
समुपदेशकं कांतं, पूजयामि जलादिकैः।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्विधदान्त त्यागधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीजिनेन्द्र श्रुतागारं, भव्य जीव प्रपादकं।
सुज्ञानदायकं लोके, महामि भवभंजकं।।2।।

ॐ ह्रीं श्रुतज्ञान त्यागधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आहार दानोपदेश, दायकं यतिनायकं।
महापुण्याकरं चर्चे, वीतकामं सुशीलकं।।3।।

ॐ ह्रीं अन्नदानोपदेश त्यागधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाबाधा प्रकान्तानां, मिथ्यारोग निवारकं।
सदोपदेश दातारं, महामि भवत्रासकं।।4।।

ॐ ह्रीं औषधदान त्यागधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिग्रह महादोष, जेतारं काम तापकं।
चाये घनरसैः शुद्धैः, शुद्धबोध प्रकाशकं।।5।।

ॐ ह्रीं परिग्रह त्यागधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन वित्त संधारं, मिथ्यावित्त निवारकं।
परोपदेश विस्तार, करं चाये जलादिकैः।।6।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनरक्षण मिथ्या त्यागधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह त्याग करं साधुं, समता धन वि पारगं।
शुद्धध्यानाप्त विस्तारं, करं चाये जलादिकैः।।7।।

ॐ ह्रीं मोहत्यागधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध त्याग करं सिद्धं, क्षमापारगतं वरं।
मानमर्दनकं सूरं, चाये विश्व हितेशिनं।।8।।

ॐ ह्रीं क्रोधरहित त्यागधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया कुण्डलिनी, त्याग करं परोपदेशकं।
मूर्च्छाछेदकरं नित्यं, पूजयामि शिवंकरं।।9।।

ॐ ह्रीं मायारहित त्यागधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महालोभ प्रहंतारं, जिन शासन रक्षकं।
पूजयामि सुत्यागेशं, स्वष्ट द्रव्य समुच्चयैः।।10।।

ॐ ह्रीं लोभ रहित त्यागधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध तन्दुललता, चरु दीपधूपफल निकरैः।
त्यागजलधि मुनिवीरं, समताधीरं यजे नित्यं।।11।।

ॐ ह्रीं उत्तम त्यागधर्मांगाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ नवम्–आकिंचन धर्मांगाय पूजा

आकिंचनं ममतादि, दूरं कृत्स्न सुखाकरं।
पूजया परया भक्त्या, पूजयामि तदाप्तये।।

ॐ ह्रीं उत्तम आकिंचनधर्मांगाय अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

चिद्रूप चिंतन परं, मम भाव विवर्जितं।
आकिंचन्य परं लोके, यजे साधुं सुपूजनैः।।1।।

ॐ ह्रीं ममताभावविवर्जित आकिंचनधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परं वैराग्य भावज्ञं, परपाखण्ड वर्जितं।
सामायिक रतं नित्यं, संयजामि सुगृह्वातिगं।।2।।

ॐ ह्रीं वैराग्यपरताकिंचनधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनित्य भवनागारं, भामा मोह विदूरगं।
एकत्वभाव-मालीनं, सौख्यदं तं यजे मुदा।।3।।

ॐ ह्रीं अनित्यभावनाकिंचनधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुत्र पौत्रादिक मोह, ध्वंशकं रति नाशकं।
संयजामि सुपानीयैः, चन्दनादि सुद्रव्यकैः।।4।।

ॐ ह्रीं पुत्र पौत्रादिमोहरहिताकिंचनधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गो महिषाश्व हस्त्यादि, दुर्ग देशन-मामकं।
महावैराग्य भावज्ञं, यजेऽहं तं वनादिकैः।।5।।

ॐ ह्रीं गोमहिष्यादिममतारहिताकिंचनधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मबन्ध क्रियाहीनं, महास्रव विनाशकं।
धर्मध्यान रतं नित्यं, महामितं तपोनिधिं।।6।।

ॐ ह्रीं पापक्रियारहिताकिंचनधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनपूजा रतं नित्यं, जिन स्नपन देशकं।
धर्मस्नेह परं चाये, स्वाकिंचन्य विसारदं।।7।।

ॐ ह्रीं जिनपूजारताकिंचनधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धनधान्य सुहृद्वादि, मम भाव विभावगं।
पूजयामि गणाधीश, माकिंचन्यपरं यतिं।।8।।

ॐ ह्रीं नगरग्रामगृहसुहृद्वादिविरक्ताकिंचनधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परीषह सहं धीरं, द्वाविंशति भेदगं।
चर्चे वीतगृहं सूरं, भव्यजीव प्रपालकं।।9।।

ॐ ह्रीं परीषहसहनाकिंचनधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रि गुण युक्त वाक्येशं, मधुरादि विपारगं।
चर्चे कामजितं सूरं, शुद्धं भाव विमोहकं।।10।।

ॐ ह्रीं हितमितमिष्टत्रिगुणसहिताकिंचनधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलगंधाक्षतैः पुष्पैः नैवेद्यैर्-दीपधूपकैः।
फलजाति समूहैश्च, संयजेऽर्घकैर्-वरैः।।11।।

ॐ ह्रीं आकिंचनधर्मांगाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ दशम्-ब्रह्मचर्य धर्मांगाय पूजा

स्त्रीविरक्तं जगत्पूज्यं, ब्रह्मचर्य महाव्रतं।
पूजया परया भक्त्या, पूजयामि तदाप्तये।।

ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्यधर्मांगाय अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

शुद्धव्रतधरं धीरं, श्री भरताधिप सुन्दरं।
ब्रह्मचर्यं व्रतागारं, पूजयामि शिवंकरं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीभरताधिप ब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाबलयुतं धीरं, बाहुबलिं महामुनिं।
ब्रह्मचर्य सु भण्डारं, पूजयामि शिवंकरं।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलि ब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनन्तवीर्यं वीरेशं, ब्रह्मचर्य व्रताधिकं।
आदिमोक्षगतं धीरं, पूजयामि शिवंकरं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तवीर्य ब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदर्शनं सुदर्शनं, धर्मध्यान विपारगं।
ब्रह्मचर्य प्रकूपारं, पूजयामि शिवंकरं।।4।।

ॐ ह्रीं सुदर्शन ब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरेन्द्रदत्तं कृपाब्धिं, ब्रह्मागारं जिनार्चकं।
सुशील संयमापारं, पूजयामि शिवंकरं।।5।।

ॐ ह्रीं सुरेन्द्रदत्त ब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीराम ब्रह्म धामं, ब्रह्म भूषण व्रतादरं।
दानपूजा कृपापारं, पूजयामि शिवंकरं।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीराम ब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्दकुन्द गुरुं चर्चे, सद्ब्रह्म व्रत पारगं।
दशधर्म सुधांभोधिं, पूजयामि शिवंकरं।।7।।

ॐ ह्रीं कुन्दकुन्दगुरु ब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अकलंकं गुरुं चाये, दशधर्म सुधांवुधिं।
महाशास्त्रकरं सूरिं, पूजयामि शिवंकरं।।8।।

ॐ ह्रीं अकलंक गुरु ब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुपात्रकेशरीं सूरिं, वीतरागोक्त भावगं।
स्वष्टसहस्त्री कर्त्तारं, पूजयामि शिवंकरं।।9।।

ॐ ह्रीं पात्रकेशरी ब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोमट्टसार सिद्धान्त, कर्त्तारं भव्यदेशकं।
नेमिचन्द्रं सुबुद्धीशं, पूजयामि शिवंकरं।।10।।

ॐ ह्रीं नेमिचन्द्र ब्रह्मचर्यधर्मांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भुवनमल यजाक्षत, सरजमोदक दीप धूप मोचफलैः।
दश कमलेभ्योऽर्घं दयाम्यहं शुद्धभावेन।।11।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशकमलेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला

ऋषिवर शिवनेता दुष्ट कर्माष्ट भेत्ता, अगम निगम वेत्ता सप्त तत्वेक चेता।
मदन नृपति जेता भव्य सार्थ प्रणेता, विशद जगत् पूज्यः जैन धर्म गुणोघः।।

(तोटक छन्दः)

विराग विमोह विरोग विभोग, विशोक विरोष विदोष वियोग।
दिनेश सयेश मुनीश निकाय, जय प्रणताखिल लोक कृताय।।1।।
दिनेश नितेश सुरेश नरेश, खगेश दिनेश विवंदित सेस।
दिनेश समेश मुनीश निकाय, जय प्रणताखिल लोक कृताय।।2।।

विमान वितान विदंभ विलोभ, विमाय विजाय विंजृम विसोभ।। दिनेश.।।3।।
विकंतु विजंतु विराजित बीस, विहास विलास विवर्जित दीस।। दिनेश.।।4।।
विसंक विमुक्त विकर्म कलंक, निरामय निर्भय निर्गत पंक।। दिनेश.।।5।।
विबाध विकासित विश्व निरास, विदूरित संसृति शंसय पास।। दिनेश.।।6।।
अचिंत्य चरित्र पवित्र सुनेत्र, विलोकित जीवनिकाय सुमित्र।। दिनेश.।।7।।
घनाघन दुंदुभि धीर निनाद, निराशित दुर्मतवादि कुवाद।। दिनेश.।।8।।
दिगम्बर वेष विकुंचित केश, विहार पवित्रित देश विदेश।। दिनेश.।।9।।
निराभरणांकित निर्मल पात्र, निरायुध निर्भय सोभित गात्र।। दिनेश.।।10।।
कुकर्म-महीरुह भेद कुठार, सुमंध नगो धरणामृतधार।। दिनेश.।।11।।
विशल्य विशूल्य निरीड विदंड, विखण्डित दुर्मद बुद्धि करंड।। दिनेश.।।12।।
कषाय निकाय रज प्र समीर, दुरास्त्रव निर्जय दुर्जय धीर।। दिनेश.।।13।।
सुरासुर भासुर किन्नर देव, खगाधिप मानुष निर्मित सेव।। दिनेश.।।14।।
विनिर्गत दुर्मल भुक्त विमुक्त, परिग्रह दुर्गह दोष विमुक्त।। दिनेश.।।15।।

(मालनी छन्दः)

अखिलगुणनिधाना निर्जितक्रोधमाना।
विरहितकुनिदानाः सप्ततत्वैकतानाः।।
'विशद' क्षमादि युक्ता सर्व दोष प्रमुक्ता।
दुरितनिवहहान्यै तान्धर्ममर्घयामि।।

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि धर्मेभ्यो जयमाला महा अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम क्षमादि धर्मः, दश लक्षणको भवेत्।
सोपानं मोक्ष पन्थानं, प्राप्ते संयम धारका।।

इत्याशीर्वादः

दश धर्मांगों की स्तुति

(तर्ज - जीवन है पानी की बूँद.....)

दश धर्मों की सीढ़ी हमको, जब मिल जाए रे!।
मुक्ती की मंजिल-हो-होऽऽऽ, क्षण में मिल जाए रे!।।टेक।।

क्रोध क्षमा का नाश करे, बोध ज्ञान को पूर्ण हरे।
जोश में जब प्राणी आए, होश पूर्णतः खो जाए।।
आतम स्वभावी हो-हो-2, क्षमा धर्म जगाए रे!।।
दश धर्मों की...।।1।।

अहंभाव में आएगा, मार्दव गुण ना पाएगा।
तुच्छ सभी को जानेगा, उच्च आपको मानेगा।।
उसके जीवन में हो-हो-2, ना मार्दव आए रे!।
दश धर्मों की...।।2।।

कुटिल भाव मन में आए, मायाचारी कहलाए।
आर्जव उत्तम धर्म रहा, कैसे पाए कहो अहा।।
आर्जव का धारी हो-हो-2, निज ज्ञान जगाए रे!।
दश धर्मों की...।।3।।

लोभ पाप का बाप कहा, उसके जो आधीन रहा।
धन में चित्त लगाएगा, धर्म नहीं वह पाएगा।।
उत्तम इस जग में हो-हो-2, वृष शौच कहाए रे!।
दश धर्मों की...।।4।।

झूँठ नहीं बोलो प्राणी, कहती है ये जिनवाणी।
सत्य धर्म जो खोएगा, बीज पाप का बोएगा।।
चारों गतियों में हो-हो-2, वह दुख उठाए रे!।
दश धर्मों की...।।5।।
छह निकाय के जीव कहे, मन इन्द्रिय छह भेद रहे।
जीवों का रक्षाकारी, इन्द्रिय मन का जयकारी।।
उत्तम सद् संयम हो-हो-2, पाके शिव जाए रे!।
दश धर्मों की...।।6।।
कर्मों के क्षय हेतु अरे!, इच्छओं का रोध करे।
बाह्याभ्यन्तर सुतप कहा, उत्तम तप यह विशद रहा।।
उत्तम तप धारी हो-हो-2, शिव पदवी पाए रे!।
दश धर्मों की...।।7।।
बाह्य परिग्रह दश जानो, चौदह अभ्यन्तर मानो।
इनका जो परिहारी है, उत्तम त्याग का धारी है।।
त्यागी इस जग को हो-हो-2, तज के शिव जाए रे!।
दश धर्मों की...।।8।।
जो किन्चित ना रागी हो, पूर्ण रूप वैरागी हो।
आंकिंचन वह कहलाए, कर्मों से मुक्ती पाए।।
उत्तम आंकिंचन हो-हो-2, जो धर्म जगाए रे!।
दश धर्मों की...।।9।।
ब्रह्मचर्य व्रत धारी है, आतम ब्रह्म बिहारी है।
जो आतम को ध्याता है, निज में ही रम जाता है।।
उत्तम ब्रह्मचर्य हो-हो-2, धर शिव सुख पाए रे!।
दश धर्मों की...।।10।।
एकाशन उपवास करे, व्रत का धारी क्लेश हरे।
क्षमावाणी फिर करते हैं, क्षमा हृदय में धरते हैं।।
पर्वों को पाके हो-हो-2, पावन हो जाए रे!।
दश धर्मों की...।।11।।

रत्नत्रय विधानम् (संस्कृत)

''माण्डला''

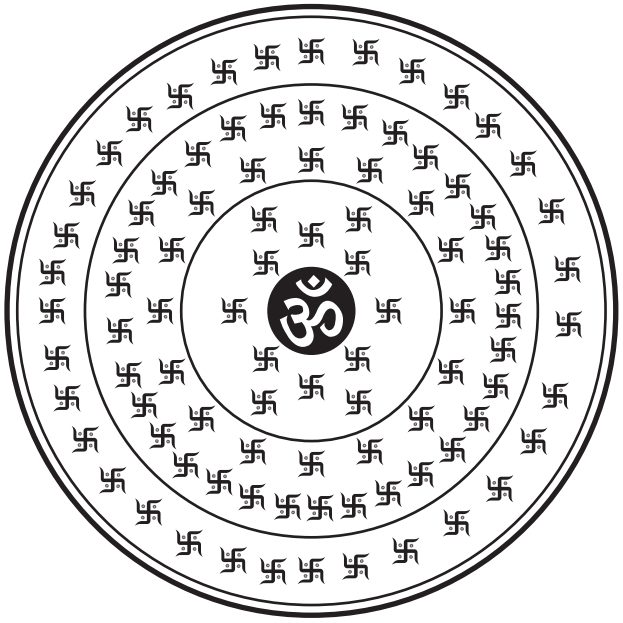

बीच में - ॐ
प्रथम वलय - 12
द्वितीय वलय - 48
तृतीय वलय - 33
कुल - 100 अर्घ्य

समन्वयक :

प. पू. साहित्य रत्नाकर आचार्य श्री विशदसागर जी महाराज

रत्नत्रय स्तवन

रत्नत्रय परं धर्मं, विशद मोक्ष कारणं।
सर्व सौख्य प्रदं एवं, भव दुःख विनाशकं।।

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

पापं लुम्पति धर्मशास्त्र चरणे, धत्ते मतिं निश्चितां,
वैराग्यं च करोति रागविरतिं, सर्वेन्द्रियाणां जयम्।
शोक-क्लेश भयादि दुःख विलयं, संसार-पारं च यो,
भ्रातस्त्वं हि विधेहि नित्य-सुभगं, तं साधुसंग सदा।।1।।
येनाऽज्ञान तमस्तति-र्विघटता, ज्ञेये हिते चाऽहिते,
ह्यनादानमुपेक्षणं च समभूत्-तस्मिन्पुनः प्राणिनाम।
येनेयं दृगुपैति तां परमतां, वृतं च येनानिशं,
तज्ज्ञानं मम मानसाम्बुज मुदेस्-तात्सूर्यवर्योदयम्।।2।।

(स्रग्धरा छन्द)

सम्यग्दृग्बोधमूलं व्रतसमिति तति स्कन्ध शाखानुबन्धं,
शीलस्तोम प्रवालं गुण कुसुम गणं सत्सुखाली फलाविम्।
गुप्तिव्राताऽऽलबालाऽमृत परिकलितं सत्वसंतापनोदं,
सम्यक् चारित्रकल्पं द्रुममहमतुलं संश्रितोऽभीष्ट पुष्टवै।।3।।

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

स्वर्मोक्षैक निबंधनं व्यघहरं, धर्मामृतैकार्णवं,
विश्वानर्थ निवारकं सुखनिधिं, भव्यैक चूड़ामणिम्।
नन्तातीत गुणाकरं सुपरमं, कर्मारिनाशं करं,
वंदे तद्गुण सिद्धये प्रतिदिनं, मूर्ध्नात्र रत्नत्रयम्।।4।।
धर्मं दुर्गतिनाशनं शुभकरं, धर्मं कुलोद्योतकं,
धर्मं सारसुख प्रमोद जनकं, लक्ष्मी यशः कारणम्।
धर्मं स्वव्रत रक्षणं गुणकरं, संसार निस्तारणं,
धर्मं श्री जिन भाषितं शुचितरं, भव्या भजन्तु श्रिये।।5।।

सद्दर्श ज्ञान चारित्र, रत्नत्रय पवित्रतं।
संवर निर्जरा हेतुं, 'विशदं' मोक्ष कारणं।।6।।

इति पुष्पांजलिं

रत्नत्रय समुच्चय पूजन

स्थापना (इंद्रवज्रा छन्द)

अनंत सौख्यामृतकूपरूपं, जिनेन्द्र सेव्यं परमं पवित्रं।
कर्मारिनाशाय हि वज्रतुल्यं, रत्नत्रय धर्म शिव सौख्य हेतुं।।

ॐ ह्रीं सम्यकदर्शनज्ञानचारित्र स्वरूप रत्नत्रय! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

(अनुष्टुप छन्द)

क्षीरोदनिर्मलनीरैः मिश्रहिमकरवासितैः।
रत्नत्रय युतं चाये, जिनकर्माष्टनाशनं।।1।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंकुमैर्मलयोत्पन्न, गंधैर्दुर्गंधनाशनैः।
रत्नत्रय युतं चाये, जिनकर्माष्टनाशनं।।2।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्रेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

राजार्ह परिमोदाग्र सदकांजलिपुंजकैः।
रत्नत्रय युतं चाये जिनकर्माष्टनाशनं।।3।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्रेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंदचंपकवाणाद्यैः, केतकी मदनोद्भवैः।
रत्नत्रय युतं चाये, जिनकर्माष्टनाशनं।।4।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्रेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पक्वान्नमोदकैः क्षीरैः, शर्क्करराघृतदुग्धकैः।
रत्नत्रय युतं चाये, जिनकर्माष्टनाशनं।।5।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्ननिर्मितसद्दीपैः, कर्पूरघृतसंभवैः।
रत्नत्रय युतं चाये, जिनकर्माष्टनाशनं।।6।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदनागर श्रीखंड, धूपधूमैरितालिभिः।
रत्नत्रय युतं चाये, जिनकर्माष्टनाशनं।।7।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्रनिंबुजमीराद्यैर्-द्राक्षादाडिमसत्फलैः।
रत्नत्रय युतं चाये, जिनकर्माष्टनाशनं।।8।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्रेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरंगधाक्षतैः पुष्पैश्-चरुदीपफलार्घकैः।
रत्नत्रय युतं चाये, जिनकर्माष्टनाशनं।।9।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्रेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(बसन्ततिलका छन्द)

मुक्तेः प्रकाशकतया समवापि येन,
लोकोत्तरोऽत्र महिमा स्व-परानवाप्य।
विध्वस्त-मोह-तमसे परमाय तस्मै,
रत्नत्रयाय महसे सततं नमोऽस्तु।।1।।

(मालिनी छन्द)

अतुल सुखनिधानं सर्वकल्याण बीजं,
जनन-जलधि-पोतं भव्यसत्त्वैक पात्रम्।
दुरित-तरु कुठारं पुण्य तीर्थ प्रधानं,
पिवतु जितविपक्षं दर्शनांग सुधाम्बुः।।2।।
दुरिततिमिर हंसं मोक्ष लक्ष्मी सरोजं,
मदन-भुजग-मंत्रं चित्तमातंग सिंहम्।
व्यसन-घन-समीरं विश्वतत्त्वैक दीपं,
विषयसफर जालं ज्ञानमाराध्य त्वम्।।3।।
नरकगृह कपाटं नाकमोक्षैक मित्रं,
जिनगणधर सेव्यं सर्वकल्याणबीजम्।
स्वपर हितमदोषं जीव हिंसादि त्यक्तं,
चारित्र परम धर्मं, सर्व संग विमुक्तम्।।4।।

(बसन्त तिलका छन्द)

सन्निश्चयश्चिदचिदादिषु दर्शनं तद्,
जीवादि-तत्त्व-परमावगमः प्रबोधः।
पाप-क्रिया-विरमणं चरणं किलेति,
रत्नत्रयं ह्रदि दधे व्यवहारतोऽहम्।।5।।

ॐ ह्रीं सम्यक्दर्शनज्ञान चारित्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सद्दर्श ज्ञानाचरणं, रत्नत्रय पवित्रतं।
पूजयामि त्रियोगेन, 'विशद' मुक्ति कारणं।।

इत्याशीर्वादः

अथ सम्यग्दर्शन पूजनं

अथातः संप्रवक्ष्यामि, तेषां सद्गुणपूजनं।
कर्णिका मध्यभागे च, पूजयेत् द्रव्यसत्तमैः।।

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयधर्मपूजनाय स्वस्तिकोपरि पुष्पांजलि क्षिपेत्

आह्वानन् स्थापन सन्निधानैः संस्थापयाम्यत्र सबीजवर्णैः।
सद्दर्शनस्यापि सुयंत्रराजं, रौप्यं तथा हेममयं च ताम्रं।।

ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यक्दर्शन अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

(बसन्त तिलका छन्द)

गंगादितीर्थ भव जीवन धारया च।
संवर्द्धिताखिल सुमंगल पुण्य वल्लिः।।
सम्पूजयामि भवतापहरं स्वनर्घ्यं।
सद्दर्शनं परमधर्मतरोश्च मूलं।।1।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीचंदनैः कनकवर्णसुकुंकुमाद्यैः।
कृष्णागुरुद्रवयुतैर्-घनसारमिश्रैः।। संपूजयामि०।।2।।

ॐ ह्रीं सम्यक्दर्शनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ्रैः सुगंधकलमाक्षत चारु पुंजैः।
हीरौज्वलैः सुखकरै-रिव-चंद्र-चूर्णैः।। संपूजयामि०।।3।।

ॐ ह्रीं सम्यक्दर्शनाय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमाभ चंपक वरांबुज केतकीभिः।
सत्पारिजातक चयैर्-वकुलादि पुष्पैः।। संपूजयामि०।।4।।

ॐ ह्रीं सम्यक्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पट्भिःरसैश्च चरुभिर्-घृतपूर युक्तैः।
शुद्धैः सुधा मधुर मोदक पाय सान्नैः।। संपूजयामि०।।5।।

ॐ ह्रीं सम्यक्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नादि सोमघृत दीपतरै-रिवार्कैः।
ज्ञानैक हेतुभिरत्नं प्रहतांधकारैः।। संपूजयामि०।।6।।

ॐ ह्रीं सम्यक्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागुरु प्रमुख धूप भरैः सुगंधैः।
कर्मेंधनाग्निभि-रहो विबुधोपनीतैः।। संपूजयामि०।।7।।

ॐ ह्रीं सम्यक्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्गापवर्गफलदैर्-वरपक्ववासैः।
नारिंगनिंबु कदलीफल-साम्रकैर्-वा।। संपूजयामि०।।8।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

(बसन्ततिलका छन्दः)

पूजाविशेषकृतमर्घमतीव भक्त्या, प्रोत्तारयामि भवसागरसेतुकल्पं।
सम्यक्त्वरत्नमपि भव्यसहायरूपं, शंकादिदोषरहितं शुभधर्मबीजं।।9।।

ॐ ह्रीं सम्यक्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम वलयः

क्षयादुपशमान्मिश्रात्, सम्यक्त्वं त्रिविधं मतं।
निसर्गाधिगमाच्चेव, तत्त्वं श्रद्धानमुत्तमं।।

ॐ ह्रीं स्वस्तिको परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

कर्मोपशमतः सम्यक्दर्शनं कर्मछेदकं।
नाम्नोपशम-मित्याहुर्-यजे नीरादिभिर्-वरैः।।1।।

ॐ ह्रीं उपशम सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध मानादि सप्तानां, क्षयोपशमतो भवेत्।
वेदकं दर्शनं रम्यं, यजे नीरादिभिर्-वरैः।।2।।

ॐ ह्रीं वेदक सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तकर्मयाज्जात-मुत्तमं क्षायिकं परं।
मुक्तिहेतुशुभं नित्यं, यजे नीरादिभिर्-वरैः।।3।।

ॐ ह्रीं क्षायिक सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध यन्-निश्चयं ज्ञेयं, निःकर्म्मात्म गुणं स्थिरं।
निर्वातं च यथा नीरं, यजे तत् दृष्टिरत्नकं।।4।।

ॐ ह्रीं सिद्धगुणनिश्चय सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(उपजाति छन्दः)

जैनागमे सूक्ष्मविचार शंका, नोदेति यत्रैव पवित्ररूपे।
तोयादिभिः शंकितदोषहीन, तत् दृष्टिरत्नं परिपूजयामि।।5।।

ॐ ह्रीं निःशंकित सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृत्वा तपोदान-सुसंयमानि, सौख्याभिकांक्षां न करोति यत्र।
निकांक्षिताख्यं सुगुणं जलाद्यैस्-तत् दृष्टिरत्नं परिपूजयामि।।6।।

ॐ ह्रीं निःकांक्षितागाय सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संक्लिष्ट देहादिक साधुवृंदं, दृष्ट्वा तदास्यं भवदंति चांगे।
तस्मिन् जुगुप्सा न करोति भव्यः, तत् दृष्टिरत्नं परिपूजयामि।।7।।

ॐ ह्रीं जुगुप्सि तांगाय सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मौढ्यत्रयादूर तरंगदंगं, चामूढ़ताख्यं प्रवदन्ति तज्ञाः।
शुद्धात्मकं मुक्तिकरं जलाद्यैस्-तत् दृष्टिरत्नं परिपूजयामि।।8।।

ॐ ह्रीं अमूढता सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आच्छादनं यत् गुरुधर्मतीर्थे, दोषे कदाचित् क्रियते कुभावात्।
आहुश्च सोपादिक गूहनाख्यं, तत् दृष्टिरत्नं परिपूजयामि।।9।।

ॐ ह्रीं उपगूहनाय सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्यादिवर्गे चलिते सुधर्मात्, स्थिरं तनोति विधिना प्रबोधात्।
तोयादिभिः सुस्थिति कारनाम्, तत् दृष्टिरत्नं परिपूजयामि।।10।।

ॐ ह्रीं स्थितिकरणाय सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आप्तोक्त धर्म व्रत पालकेषु, वात्सल्य भावात् विदधाति सेवां।
अंगं तदाख्यं सुखदं जलाद्यैस्-तत् दृष्टिरत्नं परिपूजयामि।।11।।

ॐ ह्रीं आत्सल्पांगाय सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जैनोक्त मार्गस्य तनोति भव्य, प्रोत्साहतां दानवित्तादि शक्त्या।
धर्मार्थमंगं तदहं जलाद्यैस्-तत् दृष्टिरत्नं परिपूजयामि।।12।।

ॐ ह्रीं प्रभावनांगाय सम्यक्त्व रत्नत्रयाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजाविशेषैर्-वसुद्रव्य मानैर्-यंत्रैः सुमंत्रैः खलु दृष्टिसिद्धयैः।
चोत्तारयाम्यर्घ मिदं जलाद्यैर्-वादित्रनादैः व्यवहाररूपैः।।

ॐ ह्रीं अष्टांगविध सम्यक्त्व रत्नत्रयाय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ सम्यग्दर्शन जयमाला

जय जय सद्दर्शन, कुमत विखंडन, मिथ्यामोह निवारण।
बुध कमल दिवाकर, परम गुणाकर, मुक्तिवधू सुखं करण।।1।।

(धोदक छन्द)

जय वर निःशंकित गुण विशाल, परहित निखिलं शंकादि जाल।
जय पर निःकांक्षित भोग दूर, शिवगति सुखकारण कुमुदसूर।।2।।
जय निर्विचिकित्सा गुण गरिष्ट, निर्नाशित विचिकित्सादि कष्ट।
जय निहित सकल मूढत्व भाव, जय भवनिधि भव्य समूह नाव।।3।।
जय उपगृहन वर निहित दोष, परिकृत मुनिजन बहु हृदय तोष।
जय वृष पतनादि निवार धीर, दूरीकृत भव भय दोष धीर।।4।।
जय वत्सलत्व बहुगुण निधान, परिकल्पित सुरनर अखिल मान।
जय जिनशासन विख्यातकार, विधि गुण संसार समुद्रतार।।5।।
जय जिनवर गणधर गुण करंड, संकृत मिथ्यासुख पाप दंड।
जय सुर नरपति पद जनन मूल, मिथ्यातम मोहित हृदयशूल।।6।।

(घत्ता छन्द)

इति दृगगुण संस्तुति, ममला महामति, रिह यः पठति परमभक्त्या।
रत्नत्रय सम यति-रखिलभुवनपति-रात्म पाणिगत कृत मुक्तिः।।7।।

ॐ ह्रीं निःशंकितादि भावना युक्त सम्यकदर्शनाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् पदांकितसुदर्शनमादिधर्मः, स्वर्गापवर्गफलदं गुणरत्नपात्रं।
सायुर्धनं शुभगमित्रकलपुत्रं, देयाद्विभो भुवि सुदर्शन रत्नमर्च्यं।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

अथ सम्यग्ज्ञान पूजा

आह्वानन स्थापन संन्निधापनैः, संस्थाप याम्यत्र स बीजवर्णैः।
सद्ज्ञानरत्नस्य सु यंत्रमंत्रं, रौप्ये पदे हेममये च ताम्रे।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञान अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

(बसन्ततिलका छन्द)

गंगादि तीर्थ भव जीवन धारया च।
सत् स्थूलया सदय धर्म सुवृक्ष वृद्ध्यैः।।
स्वात्मस्थ शुद्ध-मपरं व्यवहाररूपं।
सद्बोधरत्नममलं परिपूजयामि।।1।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीचन्दनैः कनक वर्ण सुकुंकुमाद्यैः।
कृष्णागुरु-द्रवयुतैर्-घनसारमिश्रैः।। स्वात्मस्थ०।।2।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थूलैः सुगन्ध कमलाक्षत चारु पुंजैः।
हीरोज्वलैः शुभतरै-रिव पुण्यपुंजैः।। स्वात्मस्थ०।।3।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमाभचंपक वरांबुज केतकीभिः।
सत्पारिजातक चयैर्-वकुलादिपुष्पैः।। स्वात्मस्थ०।।4।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शाल्योदनैः सुखकरैर्-घृतपूरयुक्तैः।
शुद्धैः सुधा मधुर मोदक पायसान्नैः।। स्वात्मस्थ०।।5।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नादि सोम घृत दीप चयैरघघ्नैः।
ज्ञानैक हेतुभि-रलं प्रहतांधकारैः।। स्वात्मस्थ०।।6।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागुरु प्रमुख धूप भरैः सुगन्धैः।
कर्मेधनाग्निभि-रहो विबुधोपनीतैः।। स्वात्मस्थ०।।7।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्गापवर्गसुखदैर्-वरपक्वासैर्-
नारिंग निंबुक दलीफन साम्रकैर्वा।। स्वात्मस्थ०।।8।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वार्गधशालिज सुपुष्प चयैर्मनोज्ञैर्-
नैवेद्य दीप वर धूप फलादिभिर् वा।।
एतैः कृतार्थमिह बोधमये सुयंत्रे।
प्रोत्तारयामि सह वाद्य सुगीतघोषैः।।9।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रत्येक पूजा

अवग्रहादिभिर्जातं, षट्त्रिंशत्त्रिशतात्मकम्।
मतिज्ञानं महद्ज्ञानं, यजे तोयादिभिर्मुदा।।1।।

ॐ ह्रीं सम्यक् मतिज्ञानाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वार्थवित् क्रियते शास्त्रं, द्वयनेक द्वादशात्मकं।
मतिपूर्वं श्रुतं ज्ञानं, यजे सर्वज्ञवत् श्रुतं।।2।।

ॐ ह्रीं सम्यक्श्रुतज्ञानाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचारो वर्ण्यते यत्र, चारित्रं मोक्ष साधकं।
गम्भीरार्थं तदंगं तद्, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।3।।

ॐ ह्रीं सम्यक्आचारांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूत्रकृतांग नामा यः, सहस्त्र षड् त्रिंशद् पदं।
द्वितीयांगं जिनेन्द्रोक्तं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।4।।

ॐ ह्रीं सूत्रकृतांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थानानि तत्त्वजीवानां, कथ्यंते यत्र तज्ञकैः।
भव्यार्थानि तदंगं च, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।5।।

ॐ ह्रीं स्थानांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यादीनां च सादृश्यं, कथ्यते समवायसः।
परस्परैस्तदंगं च, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।6।।

ॐ ह्रीं समवायांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रश्नषष्टि सहस्त्राणि, व्याख्याप्रज्ञप्तिके यतः।
प्रोच्यंते तैस्तदंगं च, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।7।।

ॐ ह्रीं व्याख्याप्रज्ञप्तांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञातृधर्मकथांगं तत्, यत्र धर्मकथा भवेत्।
गंभीरार्था तदंगं च, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।8।।

ॐ ह्रीं ज्ञातृवर्ग कथांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावकाचार सद्-बोधोपासकाध्ययनं यतः।
नाम्ना तदंगकं रम्यं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।9।।

ॐ ह्रीं उपासकाध्ययनांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशमांतकृतो यत्र, वर्ण्यंते मतितीर्थकं।
तन्नामाहि तदंगं च, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।10।।

ॐ ह्रीं आंतकृद्शांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रति तीर्थं दशोत्पत्ति, प्रोच्यते विजयादिषु।
तदौपपादिकं चांगं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।11।।

ॐ ह्रीं उपधानादिकनामांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रश्नानुसारतः यत्र, वाच्यायं ते कथा शुभाः।
प्रश्नव्याकरणं नाम, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।12।।

ॐ ह्रीं प्रश्नाव्याकरणांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाना कर्मोदयं यत्र, वर्ण्यते तीर्थचक्रिणां।
विपाकसूत्र नामांगं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।13।।

ॐ ह्रीं विपाकसूत्रांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टिवादांगसम्भूतं, श्रीप्रथमानुयोगकं।
पुराणरचना यत्र, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।14।।

ॐ ह्रीं प्रथमानुपोगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टिवादं गतं सूत्रं, सूत्रसिद्धांत संज्ञिकं।
नाना प्रमेय वाराशिं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।15।।

ॐ ह्रीं सूत्रसिद्धांताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रप्रज्ञप्तिकं नाम, श्रुतज्ञानं जिनोदितं।
वर्णनं तत्र चन्द्रस्य, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।16।।

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रज्ञप्त्यै जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्यप्रज्ञप्तिस्थज्ञानं, सूर्यादि ग्रहणादिकं।
कथ्यते यत्र सर्वज्ञैः, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।17।।

ॐ ह्रीं सूर्यप्रज्ञप्त्यै जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जम्बूद्वीप कुलाद्रीणां, वर्णनं कथिता यतः।
तत्प्रज्ञप्ति श्रुतं पुण्यं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।18।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्यै जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीपसागरचैत्यानां, वर्णनं यत्र कथ्यते।
तत्प्रज्ञप्तकभव्यार्थं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।19।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसागरप्रज्ञप्त्यै जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्याख्या प्रज्ञप्तिकाख्यं यत्, जीवाजीवादि वर्णनं।
क्रियते यत्र तद्-बोधं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।20।।

ॐ ह्रीं व्याख्या प्रज्ञप्ति श्रुताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलादिस्तंभनं यत्र, चोक्तं मंत्रादिभैषजैः।
जलादिचूलिकाख्यं तत्, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।21।।

ॐ ह्रीं जलगत चूलिकायै जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थलादिचूलिकाख्यं तत्, मेरुकुलाद्रिभूभृतां।
व्याख्यानं क्रियते यत्र, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।22।।

ॐ ह्रीं स्थलगत चूलिकायै जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायादिचूलिकाख्यं तत्, मायारुपेंद्रजालकां।
कथ्यते यत्र सर्वज्ञैर्-यजे तोयादिभिः श्रुतं।।23।।

ॐ ह्रीं मायागत चूलिकायै जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकाशचूलिकां वंदे, खे गत्यादिकवर्णनं।
यत्र भवेत्सुबोधं तत्, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।24।।

ॐ ह्रीं आकाशगत चूलिकायै जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपादि चूलिकामात्रं, चित्र कर्मादि वर्णनं।
गजादीनां च तज्ज्ञानं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।25।।

ॐ ह्रीं रूपगत चूलिकायै जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्पादपूर्वमाद्यं स्यात्, द्रव्योत्पादादि वर्णनं।
यत्रैतृपूर्व्वमहं वन्दे, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।26।।

ॐ ह्रीं उत्पादपूर्व श्रुतज्ञानाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्रायणीयपूर्वं तत्, यत्र मोक्षप्रकाशनं।
मुख्यत्वं सर्वशास्त्रेषु, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।27।।

ॐ ह्रीं अग्रायणीयपूर्व श्रुताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यत्र वीर्यानुवादाख्य-मात्मनः शक्तिवर्णनं।
एतत्पूर्व-महं वन्दे, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।28।।

ॐ ह्रीं वीर्यानुवादपूर्व श्रुताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्ति-नास्ति प्रवादं तत्, यत्र स्याद्वादलक्षणं।
एतत्पूर्व-महं वन्दे, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।29।।

ॐ ह्रीं अस्तिनास्तिप्रवाद पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानप्रवादपूर्वं च, वन्दे ज्ञानदिदेशकं।
ज्ञानप्रमाण सिद्ध्यर्थं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।30।।

ॐ ह्रीं ज्ञानप्रवाद पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्यप्रवादसंज्ञं यत्, सत्यादिभेदवाचकं।
एतत्पूर्वं नमस्यामि, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।31।।

ॐ ह्रीं सत्यप्रवाद पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मप्ररूपणं यत्र, वन्दे तां भारतीं परं।
आत्मप्रवाद पूर्वाख्यं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।32।।

ॐ ह्रीं आत्मप्रवाद पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मप्रवादपूर्वं स्यात्, यत्र कर्मादिवर्णनं।
शब्दार्थकं च नानार्थं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।33।।

ॐ ह्रीं कर्मप्रवाद पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्याख्यानं च तत्पूर्वं, यत्र सावद्यवर्जनं।
वंदेऽहं तद्भवं ज्ञानं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।34।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यान पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यत्र मंत्ररसः प्रायो, विद्यौषध्यादिवर्णनं।
विद्यानुवादपूर्वं तत्, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।35।।

ॐ ह्रीं विद्यानुवाद पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्याणवादपूर्वं तत्, यत्र कल्याणवर्णनं।
तीर्थंकरादि चक्रिणीं, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।36।।

ॐ ह्रीं वल्याणवाद पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणावादमिदं पूर्वं, चिकित्सादि प्ररूपणं।
वंदे धर्मफलं यत्र, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।37।।

ॐ ह्रीं प्राणानुवाद पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नृत्यवाद्यक्रियागीत, प्रोक्तं च यत्र पावनं।
क्रियाविशालपूर्वं तत्, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।38।।

ॐ ह्रीं क्रियादिशा पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रैलोक्यरचना यत्र, प्रोक्ता श्रीजिननायकैः।
त्रैलोक्यविन्दुं सारं तत्, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।39।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यबिन्दुसार पूर्वाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगबाह्यं श्रुतं वंदे, यत्करोत्यघनिर्जरां।
चतुर्दशविधं तच्च, यजे तोयादिभिः श्रुतं।।40।।

ॐ ह्रीं अंगबाह्यचतुर्दशविधश्रुताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टांग वर्णनम्

वर्णनं व्यंजनानां च, श्रुतज्ञानं सुलक्षणं।
स्फुरदर्थं जलाद्यैश्च, तदंगं पूजयाम्यहं।।41।।

ॐ ह्रीं व्यंजनोर्जिताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्थैर्यत्र समग्रं च, हीनाधिकार्थवर्जितं।
'विशदार्थं' जलाद्यैश्च, तदंगं पूजयाम्यहं।।42।।

ॐ ह्रीं अर्थसमप्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शब्दार्थैः सुपूर्णांगं, शब्दार्थो भयसंज्ञकं।
निर्दोषार्थं जलाद्यैश्च, तदंगं पूजयाम्यहं।।43।।

ॐ ह्रीं शब्दार्थोभयपूर्णाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अकाले पठनं प्रोक्तं, सुकालेऽध्ययने मतं।
तत्कालाध्ययनं ज्ञेयं, तदंगं पूजयाम्यहं।।44।।

ॐ ह्रीं कालोऽध्ययनोप्रभाषाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपाधानसमृद्धांगं, नियमादि भवं यतः।
विनयं देवतादीनां, तदंगं पूजयाम्यहं।।45।।

ॐ ह्रीं उपधानसमृद्धांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विनयोन्मुद्रितांगं स्या-दधिक विनयादिभिः।
जलाद्यष्टविधैर्द्रव्यैस्-तदंगं पूजयाम्यहं।।46।।

ॐ ह्रीं विनयोन्मुद्रितांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्ज्ञानं च गुर्वाद्यनापह्नं च समेधितं।
यत्पवित्र जलाद्यैश्च, तदंगं पूजयाम्यहं।।47।।

ॐ ह्रीं गुर्वाद्यनपह्नसमेधितांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुमान समृद्धाख्यां मानपूजादिपूर्वकं।
प्रोक्तं जिनैः जलाद्यैश्च, तदंगं पूजयाम्यहं।।48।।

ॐ ह्रीं बहुमानसमृद्धांगाय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजाविशेषैर्जनितं महार्घं, पंचात्मरूपे वरबोधसूर्ये।
प्रोत्तारयाम्यत्र महोत्सवेयः, वाद्यप्रघोषैर्वरमंगलाय।।49।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला

स्वर्मोक्षैकनिबंधनं भवहरं चाज्ञानविध्वंसकं।
मिथ्यामोह तमोपहं निरुपमं तीर्थेश्वरादुद्भवं।।
लोकालोकपदार्थदीपममलं योगीश्वरैरावृतं।
ज्ञानं ज्ञानधनाय नौमि वसुधा चारान्वितं संस्तुवे।।

ये पठंति विमलाक्षर सारं, ते प्रयांति सकलागम पारं।
पूजयंति परमार्थसमग्रं, ते त्यजंति संस्सृतिघनदुर्गं।।1।।
ये पठंति शब्दार्थमनेकं, ते तरंति विद्यार्णवमेकं।
ये पठंति काले श्रुतपाठं, लंघयंति ते मिथ्याघाटं।।2।।
ये कुर्वंत्युपधानसमृद्धिं, ते भजंति सर्वातिमहर्द्धिं।
अर्चयंति ये विनयाचारं, ते गच्छंति शिवालय सारं।।3।।
ये स्तुवंति विद्यागुरु पूज्यं, ते भजंति तीर्थेश्वर राज्यं।
ये यजंति शास्त्रे बहुमानं, ते पिवंति सिद्धांतसुपानं।।4।।
ज्ञानं कृत्स्नेन्द्रिय मृगपाशं, ज्ञानं महा मोहविष नाशं।
निस्संदेहं शिवसुखमूलं, अनंतं च पापारि विदूरं।।5।।
अष्टभेद-माचारविशुद्धं, ये पठंति जैनागमशुद्धं।
येऽर्चयंति भक्त्याखिलभुक्तिं, ते व्रजंति भुक्तवाखिलमुक्तिं।।6।।

घत्ता

असम गुण निधानं चित्त मातंग सिंहं।
विषयभुजगमन्त्रं कर्म शत्रुघ्नमेव।।
नरसुर पति मान्यं विश्व सिद्धान्त सारं।
वसुविधि यजनाद्यैश्चार्चयेऽर्घेण मुक्त्यै।।7।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यः सर्वथैकांतनयांधकारं, ध्वंसत्यवश्यं नयरश्मिजालैः।
विश्वं प्रकाशं विदधातु नित्यं, पायादनेकांतरविः स युष्मान्।।

इत्याशीर्वादः

ज्ञानं पंचविधं सुधारस मयं सौख्याकरं दीपवत्।
प्रत्यक्षादि परोक्ष भेदममलं स्वान्य प्रकाशात्मकं।।
धर्माद्येन सुभूषणेन रचितः सद्बोधकल्पद्रुमः।
कुर्यात् यत्ररमादिभोगसकलं ध्यानं बलं सूरिणां।।

इत्याशीर्वादः। पुष्पांजलिं।

अथ सम्यक्चारित्र पूजा

सद्व्रतं सर्वसावद्यं योगव्यावृत्तिरात्मनः।
गौणं स्याद्वृत्ति-रानन्दः ज्ञेयं चारित्रभूषणं।।1।।
अहिंसादीनि पंचैव समितिं पंचकं तथा।
गुप्तित्रयं च यत्रस्याद्देतच्चारित्र रत्नकं।।2।।

इति यंत्रस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

स्थापना

आह्वानन स्थापन सन्निधानैः संस्थापयाम्यत्र स बीजवर्णैः।
चारित्र रत्नत्रय यंत्र मंत्रं, रौप्यं तथा हेममयं च ताम्रं।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं)। अत्र तिष्ठः तिष्ठः ठः ठः (स्थापनं)। अत्र मम सन्निहितौ भव भव षट् (सन्निधिकरणं)।।

(बसन्त तिलका छन्द)

गंगादितीर्थभवजीवनधारया च, सत् सारया सुखद पुण्य सुवल्लिवृद्ध्यैः।
स्वात्मस्थ शुद्धमपरं व्यवहाररूपं, चारित्ररत्नममलं परिपूजयामि।।1।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीचन्दनैर्-'विशद' कुम्कुमहेमवर्णैः, कृष्णागुरुद्रवयुतैर्घनसारमिष्टैः।
स्वात्मस्थशुद्धमपरं व्यवहाररूपं, चारित्ररत्नममलं परिपूजयामि।।2।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थूलैः सुगन्धकलमाक्षतचारुपुंजैः, हीरोज्वलैः सुखकरैरिव चन्द्रचूर्णैः।
स्वात्मस्थ शुद्धमपरं व्यवहाररूपं, चारित्ररत्नममलं परिपूजयामि।।3।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमाभचम्पकराम्बुजकेतकीभिः, सत्पारिजातकचयैर्वकुलादिपुष्पैः।
स्वात्मस्थशुद्धमपरं व्यवहाररूपं, चारित्ररत्नममलं परिपूजयामि।।4।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शाल्योदनैः शुभतरैर्-घृतपूरयुक्तैः, शुद्धैः सुधा मधुरमोदकपायसान्नैः।
स्वात्मस्थशुद्धमपरं व्यवहाररूपं, चारित्ररत्नममलं परिपूजयामि।।5।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नादिसोमघृतदीपचयैरनर्घैः, ज्ञानैकहेतुभि-रलं प्रहतांधकारैः।
स्वात्मस्थशुद्धमपरं व्यवहाररूपं, चारित्ररत्नममलं परिपूजयामि।।6।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागुरु प्रमुखधूपभरैः सुगन्धैः, कर्माष्टकाग्निभि-रहो विबुधोपनीतैः।
स्वात्मस्थशुद्धमपरं व्यवहाररूपं, चारित्ररत्नममलं परिपूजयामि।।7।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्गापवर्गफलदैर्वरपक्वावसैर्, नारिंगलिम्बु कदली फनसाम्रकैर्वा।
स्वात्मस्थशुद्धमपरं व्यवहाररूपं, चारित्ररत्नममलं परिपूजयामि।।8।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वार्गंधशालिजसुपुष्पचयैर्मनोज्ञै, नैवेद्य दीप वरधूप फलादिभिर्वा।
ऐतैः कृतार्थ-मिह संयम मंत्र रूपे, चोत्तारयामि वरवाद्य सुगीत घोषैः।।9।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रत्येक पूजा

पंच महाव्रत (अनुष्टुप छन्द)

मनसापि न कर्तव्या, हिंसा दुर्गतिकारणं।
तद्व्रतं च जलाद्यैश्च, यजे चारित्ररत्नकं।।1।।

ॐ ह्रीं मनोविशुद्ध्याकृतहिंसाविरतिसम्यक्त्वचारित्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचने नापि कर्तव्यं, हिंसाकर्म निवारणं।। तद्व्रतं च।।2।।

ॐ ह्रीं मनोविशुद्ध्याकृतहिंसाविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायेन सर्वसावद्यं त्याज्यं निर्ग्रंथ नायकैः।। तद्व्रतं च।।3।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्ध्याकृतहिंसाविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनसापि न कर्तव्यं, मऽनोऽसत्यं कर्मनिष्ठुर।। तद्व्रतं च।।4।।

ॐ ह्रीं मनोविशुद्ध्याकृतासत्यविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचनेन हिन सत्यं, वाच्यं जीव सुखाकरं।। तद्व्रतं च।।5।।

ॐ ह्रीं प्रवचनविशुद्ध्याकृतासत्यविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायेनापि न कर्तव्य-मसत्ये प्रेरणादिकं।। तद्व्रतं च।।6।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्ध्याकृतासत्यविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तेयं हेये दुराचारं, मनसापि मुनीश्वरैः।। तद्व्रतं च।।7।।

ॐ ह्रीं मनोविशुद्ध्याकृतास्तेयविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचनेऽपि च तत् त्याज्यं, स्तेयं हिंसाकरं यतः।। तद्व्रतं च।।8।।

ॐ ह्रीं वचनविशुद्ध्याकृतास्तेयविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायेनापि न कर्तव्यं, स्तेयं स्व-परनाशकृत्।। तद्व्रतं च।।9।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्ध्याकृतास्तेयविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनसापि न चिंतव्यं, कुशीलं दुःखदायकं।। तद्व्रतं च।।10।।

ॐ ह्रीं मनोविशुद्ध्याकृतब्रह्मचर्यमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ब्रह्मचर्यधरोवाग्भि स्त्रीवार्ता सकलां त्यजेत्।। तद्व्रतं च।।11।।

ॐ ह्रीं वचनविशुद्ध्याकृतब्रह्मचर्यमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायेन रक्षितं शीलं, प्राप्तं तेन शिवालयं।। तद्व्रतं च।।12।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्ध्याकृतब्रह्मचर्यमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिग्रहः परीहेयः, मनसापि मुमुक्षुभिः।। तद्व्रतं च।।13।।

ॐ ह्रीं मनोविशुद्ध्याकृतपरिग्रहविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिग्रह सदा त्याज्यः, वचसा पाप कारणं।। तद्व्रतं च।।14।।

ॐ ह्रीं वचनविशुद्ध्याकृतपरिग्रहविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधुर्याति शिवं यस्मात्, कायत्यक्त परिग्रहः।। तद्व्रतं च।।15।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्ध्याकृतपरिग्रहविरतिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पंच समिति)

मनसान्वेषणम् कृत्वा, गच्छंति साधवो यतः।
इर्या समिति संज्ञं तत्, यजे चारित्र रत्नकं।।16।।

ॐ ह्रीं मनसाकृतैर्यासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वाग्मिर्दर्शितो मार्गो, निरवद्यस्तपोभृतैः।
इर्या समिति संज्ञं तत्, यजे चारित्र रत्नकं।।17।।

ॐ ह्रीं वचनविशुद्धयाकृतैर्यासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायेन क्रियते यत्र, गमनं दृष्टिगोचरं।
इर्या समिति संज्ञं तत्, यजे चारित्र रत्नकं।।18।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्धयाकृतैर्यासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अविष्टुराक्षरं यत्र, मनसा कोमलं वचः।
भाषा समिति संज्ञं तत्, यजे चारित्र रत्नकं।।19।।

ॐ ह्रीं मनोविशुद्धयाकृतभाषासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वाचा मधुरता यत्र, वाग्दोषैः रहितं वचः।
भाषा समिति संज्ञं तत्, यजे चारित्र रत्नकं।।20।।

ॐ ह्रीं वचनविशुद्धयाकृतभाषासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायदोषविनिर्मुक्तं, यतः सत्यार्थवाचकं।
तत्समिति जलाद्यैश्च, यजे चारित्र रत्नकं।।21।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्ध्याकृतभाषासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भुक्तिर्दोषौर्विनिर्मुक्तां, नानाशास्त्रार्थसाधिनीं।
एषणा समितिर्यत्र, यजे चारित्र रत्नकं।।22।।

ॐ ह्रीं मनोविशुद्ध्याकृतैषणासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नानाशुद्धिकरा यत्र, वचसाहारशुद्धिता।
एषणा समितिर्-ज्ञेया, यजे चारित्र रत्नकं।।23।।

ॐ ह्रीं वचनविशुद्ध्याकृतैषणासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायेन शुद्धभावेन, विदोषाहार सम्भवा।
ऐषणासमितिर्ज्ञेया, यजे चारित्र रत्नकं।।24।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्ध्याकृतैषणासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्त्वादानं दयार्द्रेण, क्षेपणं मनसा तथा।
तन्नामा समितिर्-यत्र, यजे चारित्र रत्नकं।।25।।

ॐ ह्रीं मनोविशुद्ध्याकृतादाननिक्षेपणसमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आदाननिक्षेपणं यत्र, दयार्द्रवचसा तथा।
तन्नामा समितिर्-यत्र, यजे चारित्र रत्नकं।।26।।

ॐ ह्रीं वचनविशुद्ध्याकृतादाननिक्षेपणसमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्त्वादानं दयार्द्रेण, कायेन क्षेपणं तथा।
तन्नामा समितिर्-यत्र, यजे चारित्र रत्नकं।।27।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्ध्याकृतादाननिक्षेपणसमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनसा क्षांतिः दयायुक्ता, प्रतिष्ठापनसंज्ञिका।
तन्नामा समितिर्-यत्र, यजे चारित्र रत्नकं।।28।।

ॐ ह्रीं मनोविशुद्ध्याकृतप्रतिष्ठानासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध्या वचसा च युक्ता, प्रतिष्ठापनसंज्ञिका।
समितिर्-यत्र नीराद्यैः, यजे चारित्र रत्नकं।।29।।

ॐ ह्रीं वचनविशुद्ध्याकृतप्रतिष्ठानासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध्या युक्ता च कायेन, प्रतिष्ठापनसंज्ञिका।
समितिर्-यत्र तोयाद्यैः, यजे चारित्र रत्नकं।।30।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्ध्याकृतप्रतिष्ठानासमितिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(त्रिगुप्ति)

मनसा ध्ययनोद्भूता मनोगुप्तिरघापहा।
सत्प्राप्त्यैर्-यत्र तोयाद्यैः, यजे चारित्र रत्नकं।।31।।

ॐ ह्रीं मनसाविशुद्धयाकृतमनोगुप्तिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यत्र स्वाध्यायतो जाता, वचोगुप्तिस्तपोभृतां।
वाग्विशुद्ध्या जलाद्यैश्च, यजे चारित्र रत्नकं।।32।।

ॐ ह्रीं वाग्विशुद्धयाकृतवाकगुप्तिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कायोत्सर्गविशुद्ध्या च, कायगुप्तिः सुनिश्चला।
जाता यत्र जलाद्यैश्च, यजे चारित्र रत्नकं।।33।।

ॐ ह्रीं कायविशुद्धयाकृतकायगुप्तिमहाव्रताय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारित्ररत्नमनघं परमं पवित्रं।
प्रोत्तारयामि वरमर्घमहं जलाद्यैः।।
पूर्णं सुवर्णकृतभाजनसंस्थितं च।
स्वर्गापवर्गफलदं जयघोषणैश्च।।

ॐ ह्रीं परमचारित्ररत्नाय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जाप्य : 108

जाप्य मंत्र - ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नमः॥

अथ जयमाला

(शार्दूल विक्रीडित)

संत्येवाऽत्र महाव्रतानि सततं गुप्तित्रयं मुक्तिदं।
पंचैव समितिव्रतानि सुहितं कुर्वंति भव्यात्मनां।।
तस्मात्पुण्य चरित्र रत्न निकरं सेव्यं मुदा शंकरं।
मुक्तेर्मार्गमिदं भवाब्धिशरणं भव्यै-रहं संस्तुवे।।1।।

अहिंसाव्रतं विश्वसत्वानुकंपं, यजेऽनंतशर्माकरं निःप्रकंपं।
असत्याद्विदूरं ज्ञानविज्ञानमूलं, सुसत्यं स्तुवे सर्वकर्मानुकूलं।।2।।
अदत्तातिगे कृत्स्न लोभादिदूरं, महांतं महासद्व्रतं धर्मपूरं।
परं ब्रह्मचर्य जगद्धर्म हेतुं, वरं चर्चयेऽनंतकर्माब्धिसेतुं।।3।।
व्रतंधर्मशर्माकरं त्यक्तसंगं, खलैर्लोभतृष्णादिसर्वै-रभंगं।
मनोवाक्यकायत्रयं गुप्तिगुप्तं, यजाम्यत्र हिंसादिपापै-रभीष्टं।।4।।
सुवाचां सुभाषैषणां यत्र भूतां, किलादाननिक्षेपणां धर्मसूतां।
प्रतिष्ठापनां चार्चयेऽहं पवित्रां, समित्याख्यकावृतधात्रिं विचित्रां।।5।।

परं पावन विश्वभव्यैकबंधुं, महादृष्टि चिद्वृत्तरत्नादि सिंधुं।
जगत्पूज्यमानद शर्मादिहेतुं, व्यथानिष्टरोगादि दुःखादिसेतुं।।6।।
सुरेंद्रादिभूतिप्रदं पापदूरं, जिनेन्द्रादिसेव्यं वृषांभोतिपूरं।
यजे वृत्तसार प्रमादादित्यक्तं, परंपालयामक्षघातेति सक्तं।।7।।

(मालनी छन्द)

विविधफलसमूहैर् दिव्यपक्वान्नवर्गैः।
ज्वलितबहुसुदीपैश्चार्चये वाद्य सद्यैः।।
रचितममलमर्घं हेमपात्रेति रम्यं।
त्रिदशविधचरित्रस्यैव चोत्तारयामि।।

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय महार्घं।

समस्तार्चनमांगल्यं, द्रव्यपूर्णशुभावहं।
सुदृग्ज्ञानचरित्राणां, मर्घमुत्तारयाम्यहम्।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शग्ज्ञानचारित्ररत्नत्रयधर्मेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(शार्दूल विक्रीडित)

धर्मः कल्पतरुसदाफलतरुः सोऽयं महामंगलं।
सोऽयं देवजिनेन्द्रपादजनितः संसारदुखावहः।।
तस्मात्पुत्रकलत्रशांतिकमला कीर्तिमदो वः सतां।
भूयात् संतति वल्लरी जलधरः वशान्वेयंऽसौनिजे।।

इत्याशीर्वादः

दृग्बोधादिकशुद्धवृत्तजनितं रत्नत्रयं सद्-व्रतं।
तत्पूजारचितामुनीन्द्रगणिना पुण्यात्मना सूरिणा।।
सद्भट्टारकधर्मचन्द्रपदभृद् धर्मादिभूषात्मना।
भव्योपासकशीतलेश विहितं प्रश्नान् जिनार्थात् वरं।।
गच्छे श्री शारदायाः सदतिबलगणे पावने मूलसंघे।
भव्यो दाक्षिण्यभूषो जनिकुमुदविधोः धर्मचन्दो मुनीन्द्रः।।
तत्पट्टाभोजसूर्यो जयति भूविसुखं धर्मभूयो गणेन्द्रः।
तत्कृत्या शंभव यज्जयंतु शिवकरं श्री व्रतोद्यापनं च।।

पुष्पांजलि क्षिपेत्

रत्नत्रय स्व भावोऽयं निगदन्ति महर्षयः।
नमस्तस्मै विशदाय चिदरूपाय परात्मने।।

।। इति श्री विशदसागराचार्य समन्वयेन् रत्नत्रयव्रतोद्यापनं ।।